ज्ञानामृत

जून 1987
वर्ष 22 ❋ अंक 12
मूल्य 1.50

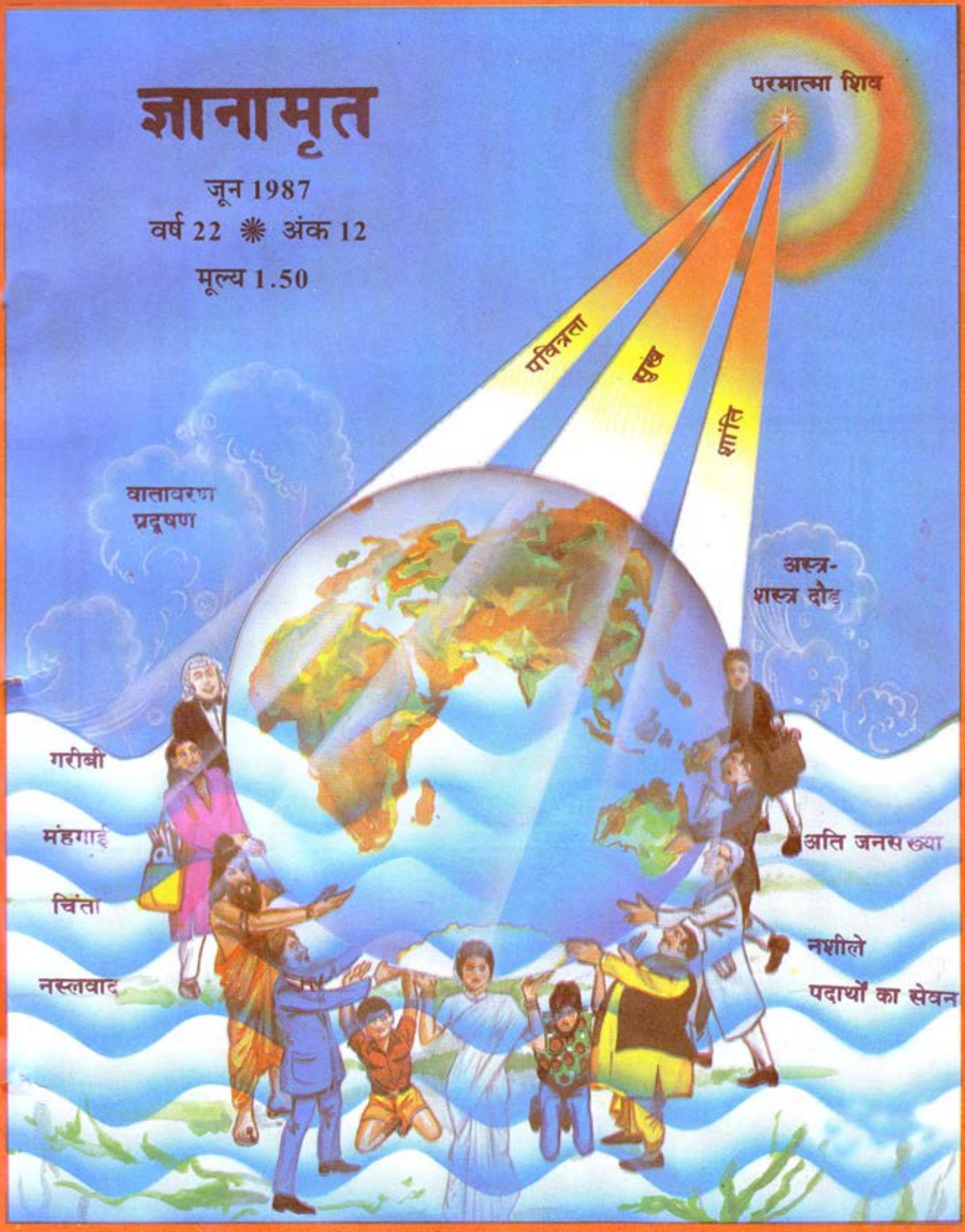

आज सारा विश्व समस्याओं के सागर में गर्त होता जा रहा है। मानव मात्र अपवित्रता, दुख और अशांति का अनुभव कर रहा है। परमपिता परमात्मा शिव जो पवित्रता, सुख-शांति के सागर हैं हर वर्ग के प्रति कहते हैं कि सुखमय संसार बनाने हेतु अपना योगदान दें।

(अधिक जानकारी के लिए सम्पादकीय पढ़ें)

सिकन्दराबाद अलवल में दादी प्रकाशमणि जी का स्वागत भ्राता एम.एन. लक्ष्मी नरसिंह (भूतपूर्व यातायात मंत्री आंध्र प्रदेश) ने किया।

काठमाण्डों में आध्यात्मिक शांति सम्मेलन के उद्घाटन समारोह में प्रमुख आयुक्त श्री वासुदेव शर्मा जी को बी.के. राज बहन ईश्वरीय सौगात भेंट कर रही है। साथ में पर राष्ट्र तथा भूमि सुधार मंत्री भ्राता शैलेंद्र कुमार जी तथा अन्य बहन-भाई बैठे है।

कोचीन में केरल राज्य के राज्यपाल महामहिम पी. रामचंद्रन 'सुंदर संसार के लिए सर्व का सहयोग' सम्मेलन के उद्घाटन में अपने विचार व्यक्त करते हुए। मंच पर (दाएं से) बी.के. शिवकन्या, भ्राता स्टीव नारायण, गुयाना के हाई कमिश्नर, न्यायमूर्ति वी.आर. कृष्णा अय्यर, बी.के. हृदयमोहिनी जी, बी.के. निर्वैर जी, न्यायमूर्ति पी.के. शम्सुद्दीन, तथा न्यायमूर्ति बहिन जानकीम्मा विराजमान है।

इंदौर 18 अप्रैल। प्रजापिता ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्वविद्यालय के तत्वावधान में ओमशांति भवन इंदौर में आयोजित साप्ताहिक कार्यक्रम "ज्ञानांजलि" में आध्यात्मिकता द्वारा विषमताओं का अंत विषय पर संस्था की सहमुख्य प्रशासिका दादी जानकी जी का दिव्य सम्बोधन हुआ। चित्र में दादी जानकी जी सभा को संबोधित करते हुए एवं मंच पर (दायीं ओर) म.प्र. हाईकोर्ट के न्यायमूर्ति वीरेंद्र दत्त ज्ञानी, ब्रह्माकुमारी जैमिनी (लंदन), ब्रह्माकुमारी कोकिला (लंदन) तथा (दायी ओर) ब्रह्माकमार ओमप्रकाश एवं ब्रह्माकमारी विमला बहिन दिखाई दे रही है।

नोगांव ब्रह्माकुमारी संध्या महिला मंडल अध्यक्षा श्रीमती अग्रवाल को ईश्वरीय सौगात देते हुए।

काठमांडु (नेपाल) में नव-निर्मित "विश्वशान्ति भवन" राजयोग प्रशि सेवाकेंद्र।

बी० के० सूर्यप्रकाश भुवनेश्वर में 'प्रजातन्त्र' के सम्पादक से भेंट करते हुए।

सोनीपत में आध्यात्मिक प्रदर्शनी का उद्घाटन हु

गुरदास पुर में ग्राम पंचायत निम्बड़ के सरपंच प्रदर्शनी देखने के पश्चात् बी.के. सुमन से ईश्वरीय सौगात लेते हुए। साथ में ब्र.कु.परम वहन एवं सत्या वहन बैठी हैं।

उमरेड सेवाकेंद्र की ओर से इंजीनियरों के एक स्नेह-मिलन में प्रमुख अतिथि विश्वनाथन जी को लक्ष्मी नारायण का चित्र सौगात में भेंट किया गया।

कोचीन में एक विशाल शांति यात्रा का आयोजन किया गया था । यह चित्र उसी अवसर का है।

भुवनेश्वर सेवाकेंद्र पर उड़ीसा राज्य के सूचना एवं सिंचाई मंत्री भ्राता भूपेंद्र सिंह जी व भ्राता हब्बीबुल्ला खां मंत्री पधारे थे । यह चित्र उसी अवसर का है।

बम्बई (नेपिन्सी रोड) सेवाकेंद्र की ओर से आयोजित सिन्धी भाई-बहनों के स्नेह सम्मेलन में दादी जानकी जी का स्वागत करते हुए भ्राता जामन दास जी मेखवानी।

दिल्ली (पांडव भवन) की ओर से एन.पी.एल. कालोनी में आध्यात्मिक प्रदर्शनी का उद्घाटन डॉ एस के जोशी (डायरेक्टर नेशनल फिजीकल लेबोरेटरी) द्वारा सम्पन्न हुआ।

शिमला हि.प्र. के स्वास्थ्य मंत्री भ्राता कौलसिंह जी ठाकुर आध्यात्मिक संग्रहालय में ब्र.कु. दादी हृदयमोहिनी जी से मिलने आए। वह दादी जी, ब्र.कु. अरुणा तथा सन्तोष बहन के साथ।

अमृत-सूची

१.	योग लगाओ, बनो देवता, तजो देह-अभिमान को	... १
२.	सर्व के सहयोग से सुखमय संसार	... २
३.	यह दुनिया बदल जाए...	... ५
४.	ईश्वरीय सेवा व श्रेष्ठ स्थिति	... ६
५.	उलटी चाल	... ९
६.	आत्म-अभिमानी स्थिति	...१०
७.	दैवी गुणों की धारणा	...१२
८.	बहुत गई थोड़ी रही, यह भी चली न जाए	...१३
९.	समय और जीवन	...१५
१०.	अविनाशी खुशी—अनमोल खजाना	...१७
११.	शांति की ओर	...२०
१२.	धर्म और कर्म	...२१
१३.	पवित्रता की सूक्ष्मता	...२५
१४.	भयंकर एड्स से भी कई गुणा	...२६
१५.	हम सभी को	...२८
१६.	आध्यात्मिक सेवा समाचार	...२९

सूचना

ज्ञानामृत के २२वें वर्ष का अंतिम अंक अर्थात् जून अंक आपको मिल चुका है। ज्ञानामृत जुलाई अंक से २३वें वर्ष में पदार्पण कर रहा है। आप सबसे अनुरोध है कि आप शीघ्र-अति-शीघ्र नए वर्ष के लिए ज्ञानामृत के सदस्यों की संख्या की सूचना ज्ञानामृत कार्यालय में २० जून से पहिले लिखने की कृपा करें। साथ-साथ शुल्क भी भेज देवें। ज्ञानामृत का शुल्क निम्न है—

वार्षिक शुल्क	20 रूपये
अर्द्ध वार्षिक शुल्क	11 रूपये
आजीवन सदस्यता	250 रूपये

शुल्क केवल 'ज्ञानामृत' 'GYAN AMRIT' के नाम भेजें।

व्यवस्थापक ज्ञानामृत
बी-९/१९, कृष्णा नगर, देहली-११० ०५१

योग लगाओ, बनो देवता, तजो देह-अभिमान को

आज मनुष्य का बुद्धियोग परमपिता परमात्मा (शिव) से नहीं है बल्कि कभी वह स्त्री को, कभी कर्मचारियों, सेवकों या सहकारियों को याद करता है, कभी धंधे या कारखाने की ओर उसका मन जाता है और कभी बाल-बच्चों की तरफ। कभी उसे यह विचार आता है कि अमुक मनुष्य उसकी निंदा करता है और कभी वह स्वयं भी परचिंतन करने लगता है। इस प्रकार मनुष्य के मन में काम-चेष्टा, क्रोधावेश, लोभ-वृत्ति, मोह-ममता, निंदा-ग्लानि की लहरें उठती ही रहती हैं और अहंकार का तो वह पुतला ही है। जब वह परमात्मा की स्मृति में स्थित होने का अभ्यास करता है तब भी उसका मन देह-धारियों, प्रकृति के पिटारों और विकारों ही के पीछे भागता है। या तो वह माला के मणिकों, शास्त्र के वाक्यों, गुरु और गुरु-मंत्रों आदि ही की ओर जाता है परंतु उसे एक ज्योतिस्वरूप, अशरीरी, परमपिता परमात्मा ही की एकांतिक तथा अमिश्रित स्मृति में टिकना नहीं आता। इस प्रकार, आज मनुष्य योगहीन है और उसका मन मलीन है। अब परमपिता परमात्मा शिव अपना जो वास्तविक परिचय दे रहे हैं, उसे सहज रीति समझकर ही वह उनकी स्मृति का रस ले सकता है—ऐसा हमारा अनुभव है। उस योग के अभ्यास द्वारा ही मनुष्य देह-अभिमान को त्याग सकता है, दिव्य गुण सम्पन्न बनकर देव पद तथा राज्य-भाग्य प्राप्त कर सकता है। □

अद्भुत रहस्य

इस ज्ञानामृत पत्रिका को आप ने ५००० वर्ष पहले भी हूबहू इसी दिन, इसी समय, इसी रूप में और ऐसी ही परिस्थितियों मे पढ़ा था। आप को मालूम रहे कि यह मनुष्य-सृष्टि एक विराट नाटक के समान है जिसका प्रत्येक दृश्य, प्रत्येक वृत्तान्त, प्रत्येक पात्र (एक्टर) हर ५००० वर्ष के बाद हूबहू पहले की तरह पुनरावृत्ति करता है !! परमपिता परमात्मा शिव द्वारा समझाये गये रहस्य का अधिक स्पष्टीकरण आप सम्मुख पधार कर प्राप्त कर सकते हैं।

सर्व के सहयोग से सुखमय संसार

आज का संसार अनेक प्रकार के दुखों व कष्टों से भरा हुआ है । गरीबी, भुखमरी, अपर्याप्त पोषण, बढ़ती हुई बेरोज़गारी, रोग और मृत्यु का बढ़ता हुआ दर, युद्ध की धमकियां, तनाव एवं प्रदूषण से भरपूर वातावरण इत्यादि ऐसी अनेकानेक सहस्त्र समस्याओं ने विश्व को घेरा हुआ है।

संसार में कुछ लोग तो युद्ध के नाशकारी परिणामों अकाल व अनावृष्टि से पीड़ित हैं, और कुछ ऐसे अनेक शरणार्थी एवं बुद्धिजीवी कैदी हैं जिनसे आज के संसार की क्रूरता तथा अन्याय से भरे रूप की झलक दिखाई देती है । समृद्ध और विकासशील देशों में लोगों की अपनी समस्याएं हैं । वे आणविक युद्ध की निरंतर धमकी के तले जीवन जी रहे हैं । वहां का वातावरण बहुत अधिक प्रदूषित है । ऊंची और नई तकनीकी ने उनके जीवन को बनावटी और नीरस बना दिया है और वे अधिकतर मशीनों पर ही निर्भर रहने लगे हैं । समाज तेजी-से बढ़ती हुई स्पर्धा, व्यवसाय और उनसे उत्पन्न होने वाले तनाव और ऐसे अनेक रोगों से पीड़ित है । निःसंदेह विज्ञान ने पाश्चात्य समाज को अनेक उपलब्धियां कराई हैं, लेकिन साथ ही इनसे नई तनावपूर्ण समस्याओं को जन्म दिया है।

अतः आज का संसार ऐसी सामाजिक-आर्थिक एवं राजनीतिक पद्धतियों से युक्त है जो परस्पर विश्वास, स्नेह व सहयोग पर आधारित नहीं परंतु वैर, विरोध, घृणा, स्पर्धा तथा शत्रुता पर आधारित हैं । परिणामस्वरूप आपसी फूट पैदा होती है। तनाव का वातावरण बढ़ता है और झगड़े, रोग, गरीबी एवं भुखमरी इत्यादि समस्याओं में वृद्धि होती है।

आशा की किरण

फिर भी, मानव के लिये आशा की एक उज्ज्वल किरण यह है कि सभी देशों में बुद्धिजीवी लोग इस बात के लिये उत्सुक हैं कि आज के इस संसार में परिवर्तन आना चाहिए । इस बात को सभी महसूस करते हैं कि एक श्रेष्ठ संसार को लाने हेतु परस्पर सहयोग के लिये कोई तरीका निकाला जाये । यह भी सभी जानते हैं कि संसार में प्राकृतिक साधनों,तकनीकी ज्ञान, कला, कच्चे माल व धन की कमी नहीं है और विभिन्न देशों, जातियों एवं वर्गों में परस्पर सहयोग से एक नये श्रेष्ठ संसार का निर्माण हो सकता है।

श्रेष्ठ संसार का अर्थ क्या है ?

श्रेष्ठ संसार के सर्व-माननीय तथ्य को जानने के लिये, पहले यह जानना उचित होगा कि 'सर्वश्रेष्ठ' (श्रेष्ठतम) संसार क्या है और इस विषय में हम एकमत कैसे हो सकते हैं ?

इस बात को तो सब स्वीकार करेंगे कि 'सर्वश्रेष्ठ' संसार हर प्रकार के फ़साद, तनाव, युद्ध या युद्ध की धमकी से रहित होगा । यह ऐसा संसार होगा जिसमें डर, असुरक्षा तथा शत्रुता का भाव नहीं होगा । इस संसार में ऐसी सामाजिक-आर्थिक व्यवस्था होगी, ऐसी राजनीतिक पद्धति तथा ऐसी संस्कृति होगी जिनसे गरीबी, बेरोजगारी, भुखमरी उत्पन्न ही नहीं होगी । सभी स्वतंत्रता के वातावरण में सांस लेंगे और आपसी वैर, विरोध नहीं होगा।

- जन-संख्या में वृद्धि की दर इतनी ऊंची नहीं होगी कि जिससे मानव आर्थिक समृद्धि के परिणामों से वंचित रह जाये ।
- विज्ञान का प्रयोग जीवन को सुलभ व सुखी बनाने हेतु होगा, परंतु यह जल, वायु एवं ध्वनि प्रदूषण पैदा नहीं करेगा और न ही इसे विध्वंसकारी कार्यों प्रति या केवल कुछ ही लोगों को सुखी बनाने के लिए प्रयोग किया जायेगा ।
- लोग श्रेष्ठ सभ्यता वाले होंगे और कला एवं संस्कृति में अश्लीलता और हिंसा लेशमात्र भी नहीं होगी । उनमें ऐसे तत्व नहीं होंगे जो समाज में फूट पैदा करें।
- लोगों के तन और मन दोनों स्वस्थ होंगे क्योंकि वे तनाव एवं प्रदूषण रहित वातावरण में जीवन व्यतीत करेंगे ।
- बच्चों और युवकों का ऐसे वातावरण में पालन होगा जिसमें उनकी कला, योग्यता तथा निजी गुणों को बढ़ावा मिले और इन सबमें उन्नत होने के लिये उन्हें पूरे अवसर पर्याप्त होंगे ।
- उनकी शिक्षा में कला, संस्कृति एवं खेलों का मिश्रण होगा । लोगों का जीवन व्यवहारिक बुद्धिमता पर आधारित होगा और उनके जीवन से श्रेष्ठ चरित्र एवं व्यक्तित्व की झलक देखने को मिलेगी । और उच्च नैतिक तथा सामाजिक मूल्य दिखाई देंगे । यह एक ऐसा जीवन होगा जो कि अज्ञानता, मूढ़विश्वास तथा हानिकारक आदतों की जंजीरों से मुक्त होगा । उनका स्वभाव दिव्यता-सम्पन्न होगा तथा उनके तन और मन दोनों शुद्ध व पवित्र होंगे ।

●ऐसे समाज में स्त्रियों का सम्मान होगा और उन्हें नौकरानी के स्तर पर या पुरुष की विलासता को पूर्ण करने की सामग्री के तौर पर प्रयोग नहीं किया जायेगा ।

●समाज में बंधुआ मज़दूर, बच्चा-मज़दूर जैसी कुरीतियां नहीं होंगी और न ही मनुष्य के साथ पशु तुल्य व्यवहार किया जायेगा । संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि सर्वश्रेष्ठ संसार वह होगा जिसमें प्रेम, एकता, मित्रता, स्वतंत्रता, शांति, सुख एवं समृद्धि होगी । साधारण जनता को भी अपने सभी अधिकार प्राप्त होंगे, उन्हें अपने अधिकारों के लिये लड़ना नहीं पड़ेगा । वे अपने कर्तव्य का पालन स्वभाविक रूप से, बिना किसी सरकारी कानून के ज़ोर से करेंगे।

सुखमय संसार के लिये क्या ये सब आवश्यक है ?

वास्तव में, उत्तम या सर्वोत्तम दुनिया के लिये ऊपर वर्णन की गई बातें एक दूसरे से संबंधित हैं उनमें से प्रत्येक बिंदु आवश्यक है । आइए, हम उनमें से दो या तीन बिंदुओं पर अपना ध्यान केंद्रित करें।

उदाहरण के तौर पर—युद्ध या युद्ध की धमकी, या युद्ध की तैयारियों की ही बात को लीजिए । यदि हम उन कारणों का विश्लेषण करें जिनसे पिछला युद्ध हुआ और जिसके परिणामस्वरूप वैमनस्यता, वैर-विरोध, फसाद, झगड़े और अधिक बढ़े, तो हम देखेंगे कि इन सब खून खराबों का मूल कारण राष्ट्रीय स्तर पर कलह-क्लेश, अहंकारपूर्ण व्यवहार, दूसरों पर अधिकार पूर्ण राज्य करने का उद्देश्य तथा दूसरों से सत्ता छीनने का ही उद्देश्य था । इस हिंसात्मक युद्ध के पीछे नकारात्मक वृत्ति थी । युद्ध के परिणामस्वरूप अर्थव्यवस्था बिगड़ी, नैतिकता का और अधिक पतन हुआ और सामाजिक व्यवस्था भी तितर-बितर हुई । आज भी विश्व युद्ध या आणविक युद्ध की निरंतर धमकियों से अस्त्र-शस्त्रों की होड़ के कारण धन-सम्पत्ति, मानव-शक्ति, प्राकृतिक साधनों, वैज्ञानिक एवं तकनीकी को इतना ज़बरदस्त नुकसान हो रहा है कि यदि इन सभी साधनों और योग्यताओं को रचनात्मक कार्यों में लगाया जाये तो समूचे संसार में से गरीबी, बेरोज़गारी तथा भुखमरी का अंत हो सकता है । इस तथ्य को अब स्वीकार करते हैं कि मिलिट्री या युद्ध की तैयारियों पर जितना खर्च होता है, उससे रचनात्मक एवं विकास के कार्यों में गम्भीर रूप से बाधा पड़ती है।

जैसे युद्ध पर किये गये खर्च से विकास के कार्य में बाधा पड़ती है, वैसे ही आबादी की तेज़ी-से बढ़ती हुई रफ्तार से भी विकास तथा रचनात्मक कार्यों में बहुत अधिक रुकावट आती है । अत: इन सब तथ्यों को एक-साथ ध्यान में रखना ज़रूरी है और उसके लिये बहुमुखी समाधान की आवश्यकता है । एक-दूसरे से जुड़ी इन सब समस्याओं के समाधान के लिये यह अनिवार्य है कि मौलिक रूप से मनुष्य के स्वभाव में तथा देशों के परस्पर व्यवहार में परिवर्तन आये।

उत्तम संसार को लाना असम्भव नहीं

यह सोचना उचित न होगा कि उत्तम या सर्वोत्तम संसार का संकल्प मिथ्या है या कोरी कल्पना है या पहुंच से बाहर है । आवश्यकता इस बात की है कि मूल रूप से मनुष्य के स्वभाव तथा व्यवहार में परिवर्तन आये ।

सर्व का सहयोग आवश्यक

अत: हमें यह दृढ़ विश्वास होना चाहिये कि श्रेष्ठ संसार जिसमें निर्धनता, भुखमरी, जनसंख्या विस्फोट तथा कोई भी प्रकार के प्रदूषण का नाम व निशान नहीं होगा की स्थापना कोई असम्भव बात नहीं है परंतु आज ज़रूरत इस बात की है कि मनुष्य के स्वभाव, संस्कार तथा व्यवहार में परिवर्तन आये । इसके लिए सर्व के सहयोग की आवश्यकता है।

सहयोग देने और लेने की भावना को उजागर करने से आश्चर्यजनक परिणाम निकल सकते हैं । एकता से व एकजुट होकर कार्य करने से हम सब समस्याओं को हल कर सकते हैं । यदि हम सब अपनी शक्तियों व साधनों को इकट्ठा जोड़कर मिलकर कार्य करें तो चमत्कारी परिणाम निकल सकते हैं । यह सोचना गलत होगा कि वह उत्तम संसार जिसमें युद्ध, निर्धनता, प्रदूषण, जनसंख्या विस्फोट जैसी विकराल समस्याएं नहीं होंगी, ऐसे संसार की स्थापना केवल एक स्वप्न या कल्पना मात्र है। निश्चित रूप से विश्व स्तर के सहयोग से इन विश्वव्यापी समस्याओं का समाधान हो सकता है । हम सबकी इस आशा और उद्देश्य की पूर्ति में यदि बाधा है तो वह हमारी आपसी फूट, हमारी स्वार्थ-भावना है । केवल अपने ही देश या अपनी जाति के हितों का ध्यान । आवश्यकता इस बात की है कि हम अपने स्वार्थ को छोड़कर, अपने ही हितों का ध्यान छोड़कर इस श्रेष्ठ विचार को अपने मन में लायें कि विश्व एक है, मानव जाति एक बहुत बड़ा परिवार है । हम सब भाई-भाई हैं या भाई-बहिनें । 'वसुधैव कुटुम्बकम्' की भावना अपने मन में जाग्रत करें। प्रत्येक व्यक्ति को यथा शक्ति इन सांझी समस्याओं को हल करने में योगदान देना है । आइए, हम सब वैज्ञानिक, धार्मिक, नेतायें, शिक्षाविद, न्यायविद, प्रसार व संचार के व्यक्ति,

राजनीतिक, राजदूत, डॉक्टर, व्यापारी, उद्योगपति, प्रशासक एवं अधिकारी, कला व संस्कृति से संबंधित लोग, संगठन एवं यूनियन, समाजसेवी संस्थाएं, मज़दूर, युवा, बच्चे, महिलाएं, सब मिलकर एक श्रेष्ठ सुखमय संसार के निर्माण में यथा शक्ति सहयोग दें।

निश्चित रूप से हर व्यक्ति में कोई-न-कोई गुण, योग्यता तथा विशेषता होती है जिससे हम इस संसार को एक सुंदर स्थान बनाने में सफल हो सकते हैं । स्वयं को श्रेष्ठ बनाने हेतु तथा एक श्रेष्ठ समाज की स्थापना हेतु हम सबको दूसरों के गुणों को धारण करना चाहिये ।

एक बहुत आवश्यक बात जिस पर हम सबको ध्यान देने की नितांत आवश्यकता है, वह यह कि संसार के कष्ट व दुख बढ़ेंगे, और लोग पीड़ित होंगे, यदि:—

- **आध्यात्मिकता के बिना विज्ञान है।**
- **विवेक तथा तर्क के बिना धर्म है।**
- **नैतिक शिक्षाओं के बिना शिक्षा है।**
- **प्रेम, वात्सल्य तथा सुधार के उद्देश्य के बिना कानून है।**
- **प्रसार व संचार के साधन मुख्यतः या केवल बुरे समाचार ही देते हैं और ऐसे कार्यक्रम नैतिक शिक्षा या श्रेष्ठ कर्म करने की प्रेरणा मिले, उन्हें छोड़ देते हैं।**
- **सिद्धांतहीन राजनीति होती है।**
- **डॉक्टर केवल शरीर के रोगों का निदान करते हैं और मन व आत्मा की ओर ध्यान नहीं देते।**
- **नैतिकता शून्य व्यापार चलता है।**
- **प्रेम या मानव के प्रति सम्मान की भावना के बिना प्रशासन।**
- **जीवन को श्रेष्ठ और पवित्र बनाने हेतु प्रेरणा के बिना संस्कृति और कला का प्रदर्शन।**
- **सम्मान-रहित सामाजिक व्यवहार।**

आइए, हम सब मिलकर इन कमियों को दूर करें और इस संसार को श्रेष्ठ बनाने के कार्य में सहयोगी बनें।

एक नवीन बैंक—आध्यात्मिक सहयोग बैंक

प्रिय भाईयों और बहनों, आओ हम एक नये प्रकार का बैंक खोलें—वह बैंक जिसमें संसार को श्रेष्ठ बनाने के लिये व्यक्तियों, संगठनों तथा राष्ट्रों का सहयोग प्राप्त हो। इस बैंक पर किसी व्यक्ति विशेष या किसी एक देश का अधिकार नहीं होगा । अनेक देशों के विख्यात चरित्रवान व्यक्तियों का यह एक संयुक्त समुदाय होगा । यह कोई विश्वव्यापी संस्था जैसे कि संयुक्त राष्ट्र संघ (UNO) या शांति विश्वविद्यालय के साथ मिलकर या उसकी मान्यता-प्राप्त संस्था के रूप में कार्य करेगा। इसके विधि-विधान को बनाने के लिए तथा इसे व्यवस्थित रूप से चलाने के लिये निर्देशकों का एक बोर्ड (Board of Directors) या ट्रस्टियों का एक परिषद (Council of Trustees) भी होगा ।

इस बैंक पर अमीर हो या गरीब, पूरे मानव समाज का अधिकार होगा । यह बैंक धनराशि की लेन-देन नहीं करेगा बल्कि यह दो प्रकार की वस्तुएं या यूं कहिए स्वैच्छिक दान जमा करेगा ।

एक प्रकार का दान (सहयोग) तो यह हो सकता है कि व्यक्ति या संस्था अपनी कोई कला, गुण या योग्यता का सहयोग दे । एक कलाकार किसी ऐसे चित्र को बनाने में अपने समय का दान दे सकता है जिसमें लोगों को या समाज के एक वर्ग को हिंसा छोड़ने और प्रेम, एकता तथा मैत्रीपूर्ण संबंध रखने की प्रेरणा मिले । एक सिनेमा कलाकार कोई ऐसी कला प्रदर्शित कर सकता है जो लोगों को इस बात से प्रभावित करे कि यदि हम क्रोध, घृणा, वैमनस्य, प्रतिशोध आदि अवगुणों का त्याग करें और एक-दो के सहयोगी बनें तो यह विश्व कितना सुंदर बन सकता है।

एक डॉक्टर अपने रोगियों को राजयोग (मैडिटेशन) का अभ्यास कराने हेतु अपना कुछ समय निकाल सकता है जिससे वे रोगी तनाव और तनाव-संबंधी रोगों से मुक्त हों । एक विज्ञापन कार्यालय संसार को उत्तम बनाने हेतु प्रेम, एकता या ऐसी विचारधारा को फैलाने में अपनी नि:शुल्क सेवाएं दे सकता है। प्रसार व संचार संबंधित लोग अपने साधनों या विशेषताओं का प्रयोग ऐसे प्रचार में कर सकते हैं जिससे लोगों में रूहानी प्रेम बढ़े तथा चरित्र निर्माण व राष्ट्र निर्माण के कार्यों में उन्हें शिक्षात्मक संदेश मिले । जिनके पास टेलीफोन, टैलेक्स (Telex) या टेलीप्रिंटर (Teleprinter) हैं, वे उनका आंशिक प्रयोग बैंक को चलाने में कर सकते हैं । व्यक्तिगत रूप से लोग अपने शब्दों के द्वारा एक-दूसरे को ऐसी कोई श्रेष्ठ नसीहत दे सकते हैं जिससे उन्हें अपनी बुराइयों को छोड़ने में कोई शिक्षा मिले । एक कवि या कहानीकार अपनी ऐसी कविता या कहानी द्वारा लोगों को एकता और प्रेम का संदेश दे सकता है।

संक्षेप में, हरेक को यह अवसर मिलेगा कि संसार की परिस्थितियों को सुधारने की दिशा में वह कोई-न-कोई श्रेष्ठ

रचनात्मक योगदान दे और वह अपना समय, गुण और यदि इसके लिए उसे कुछ खर्च भी करना पड़े, तो वह प्रसन्नतापूर्वक इन्हें बैंक में जमा कर सकता है । यह है एक प्रकार का दान (Donation)।

दूसरे प्रकार का दान यह हो सकता है कि व्यक्ति अपने अवगुणों, विकारों या नकारात्मक संस्कारों का दान दे । उदाहरण के लिए कोई अपने अंदर की घृणा-वृत्ति या वैर और बदले की भावना का दान दे सकता है जिससे कि उसके दूसरों के साथ संबंध सुधरें । कोई अपने धूम्रपान या नशीले पदार्थ के सेवन की आदत का दान दे सकता है । प्रत्येक व्यक्ति अपनी कोई-न-कोई बुरी चीज़ को छोड़ सकता है और संसार को सुधारने के श्रेष्ठ कार्य में कोई कला, गुण या समय का दान दे सकता है । यहां तक कि विकलांग तथा वृद्ध व्यक्ति भी कोई-न-कोई सहयोग दे सकते हैं । गरीब-से-गरीब व्यक्ति भी इसमें कुछ-न-कुछ श्रेष्ठ योगदान दे सकता है । अधिक नहीं, तो कम-से-कम वे राजयोग (Meditation) के अभ्यास द्वारा संसार में शांति के प्रकम्पन फैला सकते हैं ।

इनके बदले में, बैंक उन्हें एक पासबुक देगा जिसमें ऊपर वर्णित की गई चीज़ों (गुणों या विकारों) के जमा कराने पर वे उसमें नोट की जायेंगी । जमाकर्त्ताओं के लाभ हेतु पासबुक में ज़रूरी आदेश या निर्देश दिये जायेंगे । या बैंक अधिकारी उन्हें ऐसा कोई साहित्य देंगे जिससे उन्हें जीवन को पवित्र और सुखी बनाने के लिए प्रेरणा मिले । इस प्रकार का विशेष साहित्य छपवाने के लिए कोई अपनी सेवाएं निःशुल्क दे सकता है। अन्य कोई दूसरा, इस बैंक को चलाने के लिए किसी उचित स्थान का प्रबंध कर सकता है। बैंक की शाखाएं सारे विश्व में होंगी तथा इसके क्षेत्रीय और अंतर्राष्ट्रीय मुख्यालय भी होंगे । समय-समय पर यह अपनी रिपोर्ट प्रकाशित करेगा और अपने ग्राहकों को उचित मान्यता देगा । इस प्रकार इस बैंक को एक उत्तम संसार के निर्माण हेतु समूचे विश्व का सहयोग प्राप्त होगा। —जगदीश

यह दुनिया बदल जाए

दुनिया के कोने-कोने से पुकार आ रही है
स्वयं भगवान की आवाज़ आ रही है

क्या ?

यह दुनिया बदल जाए...
तुम चाहते यह दुनिया बदल जाए
हम चाहते यह दुनिया बदल जाए

क्यों बदल जाए ?

विश्व पुराना मानव दुःखमय
नीरस जीवन तनाव मुख पे
जीने हर पल मौत के भय में
भगवान चाहते यह दुनिया बदल जाए
तुम चाहते यह दुनिया बदल जाए
हम चाहते यह दुनिया बदल जाए

कैसे बदल जाए ?

दिव्य दृष्टि और योग के बल से
सत्य कर्म और सहयोग के बल से
शुद्ध मन और मधुर बोल से
जब हर इन्सान बदल जाए
इन्सान चाहते यह दुनिया बदल जाए
भगवान चाहते यह दुनिया बदल जाए

किस स्वरूप में बदल जाए ?

नव सृष्टि, स्वस्थ जीवन
एकमत और पावनतामय
अमर जीवन सदा सुखमय
ऐसी सुंदरता में अवश्य बदलेगी...बदलेगी..
बदल जाएं..

तुम चाहते यह दुनिया बदल जाए
इन्सान चाहते यह दुनिया बदल जाए
भगवान चाहते यह दुनिया बदल जाए।

□ब्रह्माकुमार निर्वैर,
पाण्डव भवन, आबू पर्वत

भावनगर में दादी जानकी जी प्रतिष्ठित व्यक्तियों के स्नेह-मिलन में ज्ञान के कुछ बिंदुओं पर प्रकाश डालती हुई।

सम्वाद

ईश्वरीय सेवा व श्रेष्ठ स्थिति

□बी.के. सूरज कुमार, आबू

ईश्वरीय सेवा हमारे ईश्वरीय जीवन का एक दिव्य कर्म है। उसी के लिए अनेक ब्रह्मा-वत्सों ने अपना सर्वस्व बलिदान किया है। सेवा हमारी स्वयं की भी उन्नति का आधार है और हमारी श्रेष्ठ स्थिति सेवा पर सम्पूर्ण प्रभाव भी डालती है। क्योंकि हमारी सेवा, मात्र बाह्य सेवा नहीं, बल्कि आत्माओं को परमात्मा के समीप ले चलने की सेवा है । तो यहां दो सेवाकेंद्र इन्चार्ज बहनों का पारस्परिक वार्तालाप दर्शाया गया है।

सरिता—मधु बहन, ओम शांति...

मधु—ओम शांति सरिता दीदी... आज बहुत दिन के बाद मिलना हुआ ।

सरिता—हां मधु बहन, मधुबन में ही होली हंसों का मिलन होता है । दस वर्ष पूर्व ही जब हम योग भट्टी में आये थे, तब ही मिलन हुआ था ।

मधु—हां दीदी, जब आप मधुबन में आते हो तो हम नहीं और जब हम आते हैं तो आप नहीं !

सरिता—तो सुनाओ मधु, आपकी सेवाएं कैसी चल रही हैं और आपके श्रेष्ठ पुरुषार्थ के दिव्य अनुभव क्या हैं ?

मधु—दीदी, हमारे अनुभव तो इतने प्रेरणादायक हैं नहीं । आपका तो हम सदा ही नाम सुनते हैं । हम तो आपकी स्थिति की भी महिमा सुनते हैं और सेवाओं की भी । सुना है आपने तो बाबा के बगीचे को बहुत बड़ा व हरा-भरा कर दिया है।

सरिता—हां, यह सब तो उसकी ही महिमा है, जो इस बगिया का मालिक है । वही सब-कुछ करा रहा है। आप अपने अनुभव सुनाओ।

मधु—बात ऐसी है कि हम सेवा में साधन भी बहुत अपनाते हैं, मेहनत भी करते हैं, परंतु लोग आते हैं और चले जाते हैं ।

सरिता—हमारी सेवाएं तो बाबा की मदद से सहज ही फलीभूत होती आई हैं । परंतु हमारी समझ में सेवा की सफलता के कुछ आधार अवश्य आते हैं ।

मधु—आज हम आपसे वही सुनना चाहते हैं कि आपने ये सेवा की सफलता व सेवा का सुख कैसे प्राप्त किया ?

सरिता—हां, मैं तो यही सोचती हूं कि यदि सेवाओं के लिए जीवन बलिदान करके भी सेवाओं में संतुष्टि न हुई तो बलिदान व्यर्थ ही गया । सेवा की सफलता से सेवा का सुख भी प्राप्त होता है तथा जीवन में संतुष्टि भी ।

मधु—सुंदर प्रेरणादायक वचन कहे आपने दीदी... सचमुच हमने जीवन बलिदान किया था, सेवाओं का सुख पाने के लिए, परंतु ऐसा कम ही हो पाया । आखिर ऐसा क्यों ? मेहनत तो हमने भी कम नहीं की, मेले किये, प्रदर्शनी भी की, गांव-गांव की सेवा भी की, भाषण भी किये, परंतु मन खुश नहीं हुआ...

सरिता—मधु बहन, ये सब तो करना ही चाहिए । परंतु जितने प्लान हम सेवा के बनाते हैं, उतने ही प्लान, स्वयं की व दूसरों की पालना के भी बनायें । वृद्धि करके यदि उसकी ठीक पालना न हो तो वृद्धि समाप्त हो जाती है।

मधु—दीदी, आप पालना कैसे करती हैं । आप हमें कुछ प्रेक्टिकल बातें सुनाएं, ताकि हमें पता चले कि हम कहां गलती करते हैं ।

सरिता—देखो मधु बहन, सर्वप्रथम बाबा की पालना है—प्रतिदिन की मुरली (ईश्वरीय महावाक्य)। मुरली पढ़ने में हम इतना रस भर दें ताकि जो भी मुरली सुन रहा हो, उसका मन खुशी-से नाच उठे, उसके मन को नई दिशा मिल जाए, उसका मन ईश्वरीय चिंतन करने लगे, उसमें जड़ता-सी न रह जाए ।

मधु—बात तो ठीक है, परंतु हमारे यहां तो प्रातः क्लास में कम ही भाई-बहनें आते हैं । हम सभी को अमृत वेले योग व क्लास का कितना महत्व समझाते हैं, परंतु...

सरिता—मधु बहन, सच कहूं तो मुरली सुनाने में इतना रस भरा हो कि यदि कोई एक बार सुन ले तो दोबारा सुने बिना न रह पाये । कहने की बात ही न हो । मुरली का सुख उन्हें चुम्बक की तरह खींच कर ले आये । बाबा के पास तो रत्न हैं, रत्नों में इतनी चमक भर दो जो न चाहते भी आत्माएं खिंची चली आवें।

मधु—मैं इन बातों से सहमत हूं, परंतु कईयों में रस आता ही नहीं ।

सरिता—एक बात और है मधु... कभी-कभी महावाक्य सुनाने वाले अपनी टीकाएं भी जोड़ देते हैं इससे कईयों को ठेस

लगती है और वे आना नहीं चाहते ।

मधु—परंतु व्यक्तिगत कहने के बजाए कई बातें तो क्लास में ही कहनी पड़ती हैं । बाबा भी तो ऐसे ही कहते थे ।

सरिता—परंतु बाबा के पितृवत प्यार व असीम शुभ-भावनाओं के कारण वे शिक्षाएं किसी को भी बुरी नहीं लगती थीं । परंतु हम बिना श्रेष्ठ भावना के शिक्षा देंगे तो वह बुरी अवश्य लगेगी । हमारे गलत भाव से सारा वातावरण ही दूषित हो सकता है।

मधु—दीदी, आपको क्या सुनाऊं, कई आत्माएं तो हम पर ही हावी हो जाती हैं । सम्मान भी नहीं करतीं, वातावरण ही बिगाड़ देती हैं । ऐसों को थोड़ी आंख न दिखाएं तो काम कैसे चले !

सरिता—बाहय रूप से तो मधु बहन, आपकी ये बात ठीक लगती है, परंतु मैं तो यह सोचती हूं कि यदि कोई हम पर हावी होता है तो हमारी स्थिति की कमी के कारण । आने वाले हमें देवी रूप में ही देखना चाहते हैं, और जब वे ऐसा नहीं पाते तो उनके मन में सम्मान की भावना कम हो जाती हैं । सत्य तो यही है कि यदि हम अपने स्वमान में रहें तो न कोई हमारा अपमान करे और न हावी हो ।

मधु—ठीक शिक्षा ही दीदी आपने ! हम अपनी गलती महसूस कर रहे हैं कि हम एक से डिस्टर्ब होकर कईयों को डिस्टर्ब कर देते हैं ।

सरिता—और फलस्वरूप सेवाकेंद्र का वातावरण योगयुक्त नहीं रह पाता और जो भी वहां आता है उसे रूहानी आकर्षण नहीं होता ।

मधु—हां, सचमुच आत्माएं राजयोग केंद्र पर शांति व सुख के लिए ही आती हैं । परंतु यदि वहां भी उन्हें वही बातें व वही वाइब्रेशंस मिलें तो वे वहां क्यों आएंगे । हमारे स्थान तो शांति-कुंड व सुखों की खान हों तब ही सेवा वृद्धि को पायेगी ।

सरिता—इसके अतिरिक्त हम बहनों में पालना के संस्कार हों । पालना भी स्थूल नहीं, सूक्ष्म । जब कोई गलती करता है तो हमें काफी समझदारी से उसको सुधारना चाहिए ।

मधु—हम तो ऐसे को शिक्षा भी देती हैं और सज़ा भी । इसके बिना तो कई सुधरते ही नहीं ।

सरिता—परंतु मधु बहन दूसरों को सुधारने का यह तरीका नहीं है । पहली औषधि है स्नेह । पहले उसे स्नेह देकर हल्का कर दो । फिर उसे उमंग-उत्साह में लाकर आगे बढ़ा दें। यदि हमने ही उनकी गलती चित्त पर रख ली और अपना व्यवहार बदल लिया तो कभी भी उनकी उन्नति नहीं होगी ।

मधु—परंतु दीदी, कई लोग तो बार-बार गलती करते हैं, उससे वातावरण भी बहुत बिगड़ जाता है और फिर सभी कहने लगते हैं कि बहन जी उन्हें कुछ भी क्यों नहीं कहती ।

सरिता—मैं आपकी इस बात से पूर्ण सहमत हूं । परंतु किसी भी कारण से हमें अपनी महानता से नीचे नहीं उतरना है। शुभ-भावनाओं से दूसरों को शिक्षा देने से पूर्ण सफलता होगी ।

मधु—तो सारा दोष अपनी स्थिति का है।

सरिता—ठीक समझा है आपने । श्रेष्ठ-स्थिति ही सेवा-वृद्धि का सर्वश्रेष्ठ साधन है । सेवाओं में मनसा-शक्ति चुम्बक का काम करती है । जहां मनसा-शक्ति श्रेष्ठ है, जहां त्यागवृत्ति है और जहां श्रेष्ठ वाइब्रेशंस हैं, वहां सेवा परछाई की तरह पीछे-पीछे भागती है । यदि सेवा वृद्धि को नहीं पा रही है तो समझना चाहिए कि सेवा करने वालों की स्थिति श्रेष्ठ नहीं है । सेवा साधनों से नहीं, साधना से होती है।

मधु—सरिता दीदी... मुझे एक राय और लेनी है कि विद्यार्थी पूरा सहयोग नहीं देते, उन्हें बार-बार कहना पड़ता है, इसमें बड़ी कठिनाई होती है । आप इसके लिए क्या करती हैं । क्योंकि मांगने से तो आत्म-गौरव नष्ट होता-सा प्रतीत होता है।

सरिता—हमें तो बाबा के ये महावाक्य सदा याद रहते हैं, बच्ची योगयुक्त रहो तो भोलानाथ स्वत: ही तुम्हारे भंडारे भरता रहेगा । हम दाता के बच्चे मांगें ही क्यों ! भगवान के बच्चे भी यदि मांगें तो सोचो, भला क्या भगवान को लज्जा नहीं आती होगी । दूसरे, मांगने से तो सेवा में बल भी नहीं भरता क्योंकि उसमें देने वाले का मानसिक सहयोग प्राप्त नहीं होता । वे खुशी से नहीं करते । उसका असर सेवाओं की सफलता पर पड़ता है।

मधु—फिर भी कहीं-कहीं इशारा तो देना ही पड़ता है।

सरिता—सो तो ठीक है । दूसरों का श्रेष्ठ भाग्य कैसे बने, इसका इशारा तो अत्यावश्यक है, परंतु हम उन्हें इतनी स्नेह की ईश्वरीय पालना दें, उन्हें इतना आगे बढ़ाएं कि वे सर्वस्व कुर्बान कर दें । मधु बहन, यह निर्विवाद सत्य है कि जिसे जहां से सच्चा मन का सुख मिलेगा, वह वहां सब-कुछ स्वत: ही करेगा । मांगने से तो हमारी रूहानियत भी नष्ट हो जाती है और यदि हम खींचने लगें तब तो सेवा ही निर्बल पड़ जायेगी । क्योंकि जो धन सच्चे मन से नहीं लगाया जाता, वह सुखकारी व सफलतादायक नहीं होता ।

मधु—यह सब तो सत्य है, परंतु इन सबके लिए काफी योगयुक्त होने की आवश्यकता है।

सरिता—हां, हम बहनों का पुरुषार्थ आदर्श होना चाहिए । सभी हमें आदर्श रूप में ही देखना चाहते हैं । और जो बहनें हमारे साथ हों, उन्हें भी पुरुषार्थ की उमंगों में रखा जाए, अपना त्याग करके भी उन्हें हर तरह के अवसर दिये जाएं, ताकि वे दमन महसूस न करें इससे केंद्र का वातावरण दिव्य एवं आनंदित रहेगा । हमारे सर्विस साथियों की संतुष्टता भी हमारा मुख्य ध्येय होना चाहिए ।

मधु—आप ठीक कहते हो दीदी... परंतु साथी भी तो भाग्य से ही मिलते हैं ।

सरिता—नहीं बहन, अब तो भाग्य बनाने की बेला है। हम योगयुक्त नम्रचित्त, सादगी सम्पन्न व त्यागमूर्त्त होंगे तो साथी भी वैसे ही बन जायेंगे।

मधु—आप तो दीदी उत्तर ही ऐसा देती हो कि हमें चुप होना पड़ता है।

सरिता—एक काम की बात और बताऊं । देखो, ज्ञान में अनेक कुमार आते हैं, परंतु ठहर नहीं पाते ।

मधु—हां, किसी को बंधन पड़ जाते हैं और कोई खुद नहीं चल पाते ।

सरिता—कुमारों को विशेष पालना की जरूरत होती है । उन्हें एक तो लौकिक की ओर से तनाव रहता है, दूसरे धंधे या आफिस में भी तनाव रहता है, फिर जब वे यहां आते हैं तो यदि उन्हें अच्छी पालना न मिले तो उनकी उन्नति भला हो कैसे ?

मधु—हां, सचमुच कुमारों को विशेष ज्ञान-योग की पालना चाहिए।

सरिता—परंतु कुमार क्योंकि जल्दी ही सेवा में लग जाते हैं,फलस्वरूप पुरुषार्थ व सेवा का संतुलन नहीं रह पाता और आत्मा शनैःशनैः कमज़ोर होती हुई, परस्पर टकराव में आती हुई निराशा की ओर बढ़ चलती है। कोई भी संसार से थककर ही प्रभु की शरण में आता है। तो उसकी यहां मन की थकान दूर हो, उसे भरपूर खुशियां प्राप्त हों, तब ही तो वह आगे बढ़ेगा।

मधु—हां, हम क्या गलती करती हैं, महसूस हो रहा है।

सरिता—मधु बहन, हम बहनें तो सेवाओं की बीज हैं । जैसे हरे-भरे होंगे, पूरा वृक्ष भी वैसा ही हरा-भरा होगा । यदि बीज ही सूख रहा होगा तो हरे वृक्ष की शीतल छाया भला कैसे मिल पायेगी । हमारे जीवन में भी सेवा व योग का पूर्ण संतुलन हो।

मधु—हां दीदी, हमें तो सभी की समस्याओं को हरना है। यदि हम ही समस्या बन जाएं तो भला सेवा विस्तार को कैसे पायेगी ।

सरिता—इसके अतिरिक्त हमारा सूक्ष्म अहं बड़ा विघ्न है । हम अहं वश कहीं-कहीं दूसरों पर बंधन रख देते हैं । इससे उनका बौद्धिक विकास रुक जाता है। वास्तव में स्वतंत्र रूप से मनुष्य अधिक सफल सेवा कर सकता है।

मधु—हां दीदी, ये तेरे-मेरे का भाव बनाकर हम यों ही इस श्रेष्ठ कार्य में विघ्न पैदा करते हैं । इससे तो न हमारी उन्नति और न सेवा-वृद्धि ।

सरिता—इसके साथ-साथ गुह्यता से ज्ञान देना भी सेवा वृद्धि का आधार है । आजकल लोगों के पास तर्क बहुत हैं, परंतु अनुभव शून्य हैं । अतः उन्हें अनुभव से ज्ञान देकर अनुभव कराना परमावश्यक है । हमें यह भी आना चाहिए कि बुद्धि वर्ग जब हमारे पास आये तो उसे संतोषजनक उत्तर कैसे दें !

मधु—हां, लम्बे समय तक चलते-चलते जीवन में अधिक उमंग नहीं रह जाता है और जीवन साधारण-सा रह जाता है।

सरिता—इसीलिए ज्ञान की गुह्यता में जाकर, नये-नये अनुभव करने से ही क्लास को भी उमंग में रखा जा सकेगा और यही आधार होगा सेवा वृद्धि का ।

मधु—हां दीदी, आजकल तो बाबा मनसा सेवा व दिव्य दर्शनी-मूर्त्त बनने की ही प्रेरणा देते हैं ।

सरिता—और अब अंत में मैं यही कहूंगी कि हमारा योग व पवित्रता का बल ही सेवा में चार चांद लगाता है। जरा भी अपवित्रता सेवा को छिन्न-भिन्न कर देती है। अतः हमारा मातृत्व-स्वरूप हो, हम सभी को देते चलें, लेने की कोई कामना न हो, दिखावे का कोई अंश न हो, हमारा मुख अमृतधार बहाये और हम कभी अपने अधिकारों का दुरुपयोग भी न करें, अधिकार हमें दूसरों को सुख देने के लिए मिले हैं तो अवश्य ही हमारी सेवाएं विस्तार को प्राप्त होंगी ।

मधु—धन्यवाद दीदी ! अब मैं आपकी सेवाओं का रहस्य समझ गई । आपने सेवा के साथ स्वस्थिति को बहुत महान् बनाया है, तब ही आपके चेहरे पर खुशी की झलक है। मैं भी यही करूंगी । अच्छा, ओम शांति...

सरिता—ओम शांति... फिर मिलेंगे।... □

"मुक्तक"

यात्री हो तुम यहाँ से घर को जाना है ।
चाहे तुम छोड़ो न किन्तु ये तो छूट जाना है ।।
अशरीरी हो के ही तुम आये थे इस संसार में ।
चमड़ी-दमड़ी छोड़ बिन्दु होके जाना है ।।

उलटी चाल

ब्र.कु. कमलमणि, कृष्णा नगर दिल्ली

एक राजा का अति सुन्दर और रमणीक बग़ीचा था। राजा उस बग़ीचे की शोभा को देखकर मन-ही-मन हर्षित होता था। अकस्मात उस हरे-भरे उपवन में फूल-पौधे और वृक्ष मुरझाने लगे। राजा अपने बग़ीचे की दुर्दशा देख अति चिन्तित हुआ।

एक दिन राजा ने स्वयं बग़ीचे का निरीक्षण (जाँच) करने का निश्चय किया। बाग़ में काम करने वाले सभी कर्मचारियों को आज्ञा दी गई कि जिस दिन राजा बग़ीचे की जाँच करने आवे उस दिन सभी माली अथवा अन्य कर्मचारी अपने-अपने काम में लगे होने चाहिएँ ताकि जहाँ भी कहीं त्रुटि दिखाई दे तो राजा बग़ीचे के सुधार का उपयुक्त सुझाव दे सके। निश्चित प्रोग्राम के अनुसार राजा बाग़ में पधारे और एक-एक कर्मचारी का काम देखने लगे। राजा के आश्चर्य की कोई सीमा न रही जब उसने देखा कि माली पौधों की जड़ों में पानी देने की बजाय पत्तों को पानी से सींच रहे हैं। राजा ने इस पागलपन का कारण पूछा। जवाब में बताया गया कि पानी की कमी के कारण केवल पत्ते ही धो दिए जाते हैं और जड़ में पानी नहीं दिया जाता। कर्मचारियों की मूर्खता और उल्टी रीति पर राजा को बहुत हँसी आई और वह कहने लगा कि—"यह जड़ ही तो है जिसकी सिंचाई पर पौधे का सम्पूर्ण जीवन निर्भर है। पत्तों को लाख बार सींचने पर भी पौधे को हरा नहीं किया जा सकता।" तब राजा ने पानी का उचित प्रबन्ध करा दिया। जड़ों की सिंचाई होने लगी और बग़ीचा थोड़े ही दिनों में लहलहाने लगा।

इस उदाहरण को जब मैं आज की आध्यात्मिक स्थिति पर घटाती हूँ तो यह उदाहरण आज के भोले-भाले भक्तों, ईश्वर-प्रेमियों और तथा-कथित विद्वानों पर पूरा उतरता है क्योंकि आज के ईश्वर-विश्वासी मनुष्यों ने सृष्टि के बीजरूप अथवा मूल रूप परमपिता परमात्मा निराकार शिव को याद करने की बजाय परमात्मा की रचना, जैसे कि श्री राधा श्री कृष्ण, श्री लक्ष्मी-श्रीनारायण, श्री सीता-श्रीराम आदि साकार देवी-देवताओं, ब्रह्मा, विष्णु, शंकर आदि सूक्ष्म देवताओं तथा देह-अभिमानी गुरुओं और गोसाइयों, जिनकी तुलना सृष्टि रूपी कल्प वृक्ष के पत्तों से की गई है, उनकी पूजा शुरू कर दी है। भक्ति मार्ग में तो इतनी दुर्गति हो गई है कि बेचारे भक्तजन अज्ञानता-वश नाग (साँप) को तथा पीपल, जंडी आदि वृक्षों को भी देवता मानकर सुख और शान्ति के लिए उनकी पूजा करते हैं, यहाँ तक कि रास्ते के चौराहों आदि को भी पूजने से नहीं सकुचाते। आज वे मन्दिरों और गुरुद्वारों में धूलि उठाकर माथे पर लगाने से आत्मा का अन्धकार दूर करने में लगे हुए हैं। नदियों और छोटे-छोटे स्वच्छ या गन्दे पानी के तालाबों में सख्त सर्दी के दिनों में वे कुम्भ का मेला मनाकर भगवान् को रिझाने का साधन मान बैठे हैं। विचार कीजिये कि यदि भगवान् अपनी रचना की पूजा को और अनेक कर्म-काण्डों को ही मुक्ति का द्वार बताते तो धर्म-ग्लानि के समय भगवान् के अवतरण की ज़रूरत न होती। तभी तो भगवान् ने स्पष्ट कहा है कि—"मैं यज्ञ तथा कर्म-काण्डों इत्यादि द्वारा नहीं मिलता बल्कि मैं जो हूँ और जैसा हूँ मुझे वैसा ही मानकर मेरी याद में रहने वालों को मिलता हूँ।" अतः जैसे पतिव्रता नारी की बुद्धि में केवल अपने एक पति की ही याद रहती है, इसी तरह सच्चे ज्ञानी या सच्चे बच्चे के मन में भी सिवाय एक भगवान् की याद के और किसी की भी याद नहीं रहती।

भगवान् के अवतरण से पहले तो इन साधनों को अपनाना कुछ हद तक ठीक भी माना जा सकता था परन्तु उनके इस धरती पर आ जाने पर भी पुरानी रट में फंसे रहना महान अज्ञानता

(शेष पृष्ठ २५ पर)

"आत्म-अभिमानी स्थिति"

□ब्र.कु. आत्मप्रकाश, आबू पर्वत

आत्मा अपने मूल स्वरूप में सम्पन्न व सम्पूर्ण है। जब आत्मा इस धरा पर अवतरित होती है तो वह सर्वगुण व सर्व-शक्तियों की स्वरूप होती है। यद्यपि उस काल में आत्मा को आत्मा का ज्ञान नहीं होता, परंतु मनुष्य अर्थात् देवताएं आत्मिक गुणों के स्वरूप होते हैं । और यह स्थिति हज़ारों वर्ष तक चलती है । धीरे-धीरे गुणों की शक्ति का ह्रास होता है और गुण कमज़ोर होने लगते हैं और द्वापर युग के बाद आत्मा की शक्तियां कम होने के कारण उसमें विकारों का प्रादुर्भाव प्रारम्भ होता है । फलस्वरूप शनैः-शनैः मनुष्य देह के आकर्षण में लिप्त होकर दैहिक अवगुणों का स्वरूप बन जाता है अर्थात् मनुष्य पूर्णतया देह-अभिमानी बन जाता है । अब यही स्थिति है।

अब पुनः आत्मा को मूल स्वरूप में ले चलना है, अर्थात् अब आत्म-अभिमानी बनने का समय है । इसके लिए राजयोग का मुख्य ज्ञान सर्वज्ञ परमात्मा द्वारा दिया गया है।

आत्म-अभिमानी होने के लिए सर्वप्रथम अभ्यास है—अशरीरी होने का । आत्म-अभिमानी स्थिति है देवताओं की और उसे हमें प्राप्त करने के लिए प्रथम अभ्यास करना है—अशरीरी भव का अर्थात् स्वयं (आत्मा) को पूर्णतया देह से न्यारा अनुभव करने का ।

भिन्न-भिन्न स्वरूप से अशरीरी-पन के अभ्यास के द्वारा ज्यों-ज्यों हमें ये अनुभव होता जायेगा कि मैं आत्मा इस देह में विराजमान हूं, मैं आत्मा इस देह में अवतरित हूं, वैसे-वैसे ही आत्मा के सर्वगुण प्रत्यक्ष स्वरूप में आते जाएंगे । और फिर परमात्मा से योग जोड़ने से इन गुणों में शक्तियां भरने लगती हैं व आत्मा सर्वगुणों व शक्तियों का स्वरूप बन जाती है।

तो जितना-जितना हम गुणमूर्त व शक्तिमूर्त बनते जाएं हमें समझना चाहिए कि हम आत्म-अभिमानी स्थिति को प्राप्त करते जा रहे हैं । यहां हम आत्मा के सर्वगुणों व शक्तियों की संक्षिप्त व्याख्या करेंगे जिससे पुरुषार्थी ये जान सकते हैं कि हम कहां तक इस स्थिति के समीप पहुंचे हैं ।

इस आत्म-अभिमानी स्थिति में आत्मा पूर्णतया दिव्य स्वरूप बन जाती है, जीवन में तथा चेहरे पर दिव्यता झलकने लगती है, इसे ही रूहानी आकर्षण या रूहानियत कहते हैं । इसलिए ईश्वरीय महावाक्य हैं कि "**अष्ठ रत्न ही सम्पूर्ण आत्माभिमानी बनते हैं।**"

आत्म-अभिमानी स्थिति की व्याख्या आठ स्वरूपों में की जा सकती है ।

१. **ज्ञान-स्वरूप**—सम्पूर्ण ज्ञान श्रवण के उपरांत अर्थात् अमृतपान करने के बाद आत्मा को पूर्ण अमरत्व की अनुभूति होनी चाहिए । अर्थात् किसी भी तरह का भय, मौत का भय पूर्णतया समाप्त हो जाना चाहिए । अमृतपान करके आत्मा को (स्वयं को) पूर्णतया भरपूर अनुभव करना चाहिए, खालीपन नहीं, वरन् सदा ज्ञान-भंडार से सम्पन्न अनुभव हो।

ज्ञानी अर्थात् जिसके संकल्प, बोल व कर्मों में दिव्यता व अलौकिकता हो । ताकि देखने वाले यह मानें कि ये ज्ञानी है। ज्ञानीपन का अर्थ केवल तार्किक बुद्धि होना नहीं बल्कि ज्ञान से बुद्धि पूर्णतया दिव्य हो जाए, मन के संकल्प ज्ञान के अनुरूप चलने लगें। अर्थात् जो कुछ हम ज्ञान सुनायें वह हमारे कर्मों में हो । ज्ञान का प्रत्येक महावाक्य एक "बल" के रूप में अनुभव हो ।

२. **प्रेम-स्वरूप**—ज्ञान प्राप्ति के बाद आत्मा में रूहानी प्रेम समा जाए । सबमें अपने-पन का भाव जागृत हो और समान रूप से सभी के लिए मन में शुभ-भावनाएं जागृत रहें। सभी परिस्थितियों में प्रेम स्थिर रहे । ईर्ष्या, द्वेष या दूसरों का व्यवहार हमारे प्रेम-स्वरूप को कम न करें । ये प्रेम हद का प्रेम या दैहिक प्रेम न हो, इसमें बेहद की वृत्ति व पूर्ण आत्मीयता हो । ऐसा होने पर हमारे बोल भी प्रेम-युक्त होंगे व व्यवहार भी प्रेम-युक्त होगा। सम्पर्क वालों को अनुभव हो कि इन्हें सभी से सच्चा प्यार है । इनके प्यार में स्वार्थ और बनावट नहीं है । ऐसी प्रेम-स्वरूप आत्मा का चित्त सदा ही शीतल व अविचलित होता है।

३. **शांत-स्वरूप**—अशरीरी-पन का अभ्यास करते-करते मन शांत हो जाए, स्वरूप से ही शांति झलकने लगे । ये शांति डिस्टर्ब होने वाली न हो । शांति अभ्यास से नहीं, मौन रखने मात्र से नहीं वरन् जीवन में कर्म क्षेत्र पर, वचनों में शांति समाई हो । इस शांति को कोई भंग न कर सके । देखने वालों को व सम्पर्क में आने वालों को शांति का प्रवाह आता रहे । समीप आने वालों के भी मन शांत हो जाएं, जहां भी वे रहें वहां शांति का ही वातावरण निर्माण हो जाए । ये है आत्मा की शांत-स्वरूप स्थिति।

४. शक्ति-स्वरूप—ज्ञान व योग के बल से आत्मा मनोविकारों व व्यर्थ संकल्पों पर विजय प्राप्त करके शक्तिशाली बनने लगती है । आत्मा का आत्मविश्वास व मनोबल बढ़ने लगता है, वह स्वयं को विघ्नों पर विजयी अनुभव करने लगती है। सर्व-शक्तियां स्वरूप से दिखाई देने लगती हैं, नम्रता बढ़ने लगती है । सम्पर्क संबंध वालों को यह आभास होता है कि ये शक्तिशाली आत्मा है, किसी भी परिस्थिति में ये विचलित नहीं होते ।

उनके मुख से कभी भी ये बोल नहीं निकलेंगे कि मैं कमज़ोर हूँ या ये काम मैं नहीं कर सकता । उन्हें सब-कुछ सहज व सफल महसूस होगा । वे अपनी आथर्टी में भी रहेंगे व हर परिस्थिति में संतुलन भी रख सकेंगे।

५. आनंद स्वरूप—अभ्यास करते-करते आत्मा आनंदित रहने लगेगी । मन एक अनुपम-सी मस्ती में विचरण करेगा । यह आनंद किसी स्थूल वस्तु के आधार पर नहीं बल्कि आत्मा स्वयं में ही श्रेष्ठ संकल्पों के, श्रेष्ठ प्राप्ति के आधार पर आनंदित होगी । वातावरण उसके आनंद को क्षीण नहीं कर सकेगा । यह आनंद उसके चेहरे पर स्पष्ट दिखाई देता रहेगा।

६. सुख-स्वरूप—ज्ञान व योग के द्वारा आत्मा को सम्पूर्ण सुख प्राप्त हो गया हो, उसे अन्य कहीं भी सुख की तलाश न हो । वस्तुओं में या प्राप्तियों में सुख न खोजते हो । हर समय, हर भाव काल में, किसी भी वातावरण में रहते हुए आत्मा सदा स्वयं को सुख स्वरूप अनुभव करे । उसके जीवन में दुख की अविद्या हो गई हो । न उसके मुख से दुखदाई बोल निकलें, न दुखदाई संकल्प हों, न कर्म । उसके बोल मानो दूसरों पर सुख की बरसात करते हों । यह सुख ईश्वरीय सुख है, सांसारिक सुख नहीं। इसे ही अतीन्द्रिय सुख कहा जाता है। इसमें असीम खुशी भी समाई होती है। ज्ञान मनन कर आत्मा अंदर-ही-अंदर सुख का रसपान करती रहती है। और देखने वालों को भी यही आभास होता है कि इनसे सुखी कोई भी नहीं है।

७. पवित्र-स्वरूप—यह स्वरूप भी आत्मा का मूल स्वरूप है, जो अब सम्पूर्णतया नष्ट हो चुका है । तो आत्माभिमानी स्थिति पर पहुंची आत्मा सम्पूर्ण पवित्रता का स्वरूप बन जाती है । उसे अपवित्रता की वैसे ही अविद्या हो जाती है जैसे कि सतयुग में।

ये पवित्रता उसके चेहरे के तेज व दिव्यता के स्वरूप में दृष्टिगोचर होती है । ये पवित्रता आत्मा के साथ एक बड़ा भारी बल भी होता है । ऐसी आत्मा इस धरा पर स्वयं को पवित्रता का अवतार अनुभव करती है और दूसरों को भी उससे पवित्रता के परकम्पन आते हैं ।

८. प्रकाश-स्वरूप—आत्माभिमानी स्थिति वाली आत्मा को उसके प्रकाश स्वरूप का चलते-फिरते ही साक्षात्कार होता रहता है। उसका तन भी मानो प्रकाशमय हो जाता है। उसके चारों ओर प्रकाश का पुंज स्थापित हो जाता है। उसका मन, बुद्धि भी सदा प्रकाशित रहता है । वे इस धरा पर मानों लाइट हाउस बनकर रहती है। इसमें उसका मन भी सदा हल्का रहता है । उसके इस प्रकाश-स्वरूप स्थिति से अनेकों का अंधकार दूर होता रहता है । वे स्वयं को पल भर के लिए भी अंधकार में महसूस नहीं करती ।

ये ८ लक्षण हैं आत्म-अभिमानी स्थिति के । अब इनसे स्वयं को चेककर सकते हैं कि हम कहां तक आत्माभिमानी बने हैं। □

(पृष्ठ २४ का शेष) धर्म और कर्म

शान्ति, स्नेह तथा दयालु बनने की शिक्षा देता है । हाँ, धर्म का स्वरूप ही यदि विकृत हो जाय तो वह बात अलग है ।

अतः आज परमपिता परमात्मा अथवा गीता के भगवान् पुनः जो ज्ञान (दर्शन पक्ष), योग (साधना-पक्ष दिव्य गुणों की धारणा तथा पवित्रता (आचार पक्ष अथवा जीवन दर्शन) की तथा कर्म करते हुए भी पवित्र रहने तथा दिव्य मर्यादा का पालन करने की जो शिक्षा दे रहे हैं, उसे समझकर हमें धर्म द्वारा कर्म को श्रेष्ठ और विकर्म को दग्ध करना चाहिए और उन द्वारा सिखाये योग द्वारा ईश्वरीय आनन्द को प्राप्त करना चाहिये । अब धर्म की विकृति देख कर दैवी धर्म की पुर्न-स्थापना करने भगवान् स्वयं आये हैं; हमें अब धर्म से पूरा लाभ लेना चाहिये ।

(पृष्ठ १२ का शेष) दैवी गुणों की धारणा

कल्पना कीजिए इस समाज की जहां सभी सुधरे हुये हों, जहां कोई लड़ाई-झगड़ा, हिंसा, उत्पात, घोखाधड़ी, बेईमानी आदि न हो तो मनुष्य कितना सुखी होगा । ऐसे स्वस्थ, सुखी सम्पन्न समाज के निर्माण का गुरुतर कार्य ही ब्रह्माकुमारियों एवं कुमारों ने अपने हाथों में लिया है, क्या यह हमारा परम कर्त्तव्य नहीं है कि हम ईश्वरीय मतानुसार स्व परिवर्तन करें । और ब्रह्माकुमारियों एवं कुमारों को विश्व में शांति की स्थापना जैसे श्रेष्ठ कार्य के लिये अपना हार्दिक सहयोग प्रदान करें। □

दैवी गुणों की धारणा

□ब्र.कु. ओमप्रकाश मुसरहा, बांदा

सिने जगत में स्वर सम्राट कहे जाने वाले, महान गायक मौहम्मद रफ़ी से एक बार किसी व्यक्ति ने पूछा, ''रफ़ी साहब, आप इतने अच्छे गायक कैसे बन गये।'' अपने जीवनकाल में तकरीबन २५,००० सुमधुर गीतों को स्वर प्रदान करने वाले महान गीतकार मौहम्मद रफ़ी ने गंभीरता से उत्तर दिया, ''जो भी मुझसे मिलता है, उसे मैं अपना गुरु बना लेता हूं।'' पूछने वाले को असमंजस में देख उन्होंने आगे कहा, ''अरे भाई प्रत्येक व्यक्ति में कोई-न-कोई गुण तो अवश्य ही होता है, और जो भी मुझसे मिलता है, मैं उसके गुण ले लेता हूं तो बताओ वह मेरा गुरु हुआ कि नहीं । और मैं आज जो कुछ भी हूं, उन्हीं गुणों को धारण करने के कारण ही तो हूं।''

कितनी सच बात है यह कि हमें दूसरों के गुण देखने चाहिएं, व उन्हें अपने जीवन में धारण करना चाहिये किंतु आज संसार व व्यक्तिगत जीवन में तो ठीक इसके विपरीत हो रहा है । आज का मानव अपनी कमियों की ओर नहीं देख रहा किंतु वह दूसरों की कमियों व दुर्गुणों को ही देख रहा है।

हालांकि यह भी सत्य है कि जब हम किसी व्यक्ति की ओर दोषारोपण हेतु एक उंगली उठाते हैं तो बाकी की चार उंगलियां यह इशारा करती हैं कि तुम चार गुणा दोषी हो । इसके विपरीत इस सत्य का प्रयोग हम यूं भी कर सकते हैं कि जब आप किसी का एक गुण देख, उसकी प्रशंसा करेंगे तो उसके प्रतिफल स्वरूप वह आपकी चार गुनी सुखदायी प्रशंसा करेगा ।

आज के समय में तो लगता है महान संत कबीर की बात भी पिछड़ गयी है कि:—

बुरा जो देखन मैं चला, बुरा न मिलियो कोय।
जो दिल देखो आपनो मुझसे बुरा न कोय।।

किंतु आज का मानव तो परमात्मा द्वारा दी गयी स्वचिंतन की श्रीमत का पालन न कर परचिंतन में ही लिप्त है । आज का मानव शिवबाबा द्वारा बताये श्रेष्ठ लक्ष्य—सोलह कला सम्पूर्ण, सम्पूर्ण निर्विकारी, मर्यादा पुरुषोत्तम, अहिंसा परमोधर्मा बनने के स्थान पर काम, क्रोध, मोह, लोभ, अहंकार, आलस्य व देहाभिमान जैसी बीमारियों को पालने में लगा है। वह तो कुंभकर्णी निंद्रा में सोया पड़ा है, उसे कहां फुर्सत है कि परमपिता परमात्मा शिव जो इस पुरुषोत्तम संगम युग के समय हम सभी आत्माओं को ईश्वरीय ज्ञान एवं राजयोग की शिक्षाएं दे रहे हैं, उनका अपने जीवन में पालन करें और मनुष्यों से भी ऊंच-महान, देवी-देवताओं सदृश सुखी बन जायें। उसे तो अल्पकाल के सुख में ही आनंद है । यह शिवबाबा द्वारा बताये राजयोग के चार स्तम्भों— (१) ब्रह्मचर्य (२) सतसंग (३) शुद्ध अन्न व (४) दैवी गुणों की धारणा को अपने जीवन में स्थान ही नहीं देना चाहता तो कहां समझ पायेगा वह गायक मौहम्मद रफ़ी की बात, कि मैं जो भी मेरे सम्पर्क में आता है, उसके गुण ले लेता हूं और इस प्रकार बन जाता हूं संसार का महान गायक स्वर सम्राट मौहम्मद रफी।

जबकि आज तो स्वयं निराकार, सच्चिदानंद, सर्वगुण सम्पन्न, सर्वशक्तिवान, परमपिता, परम शिक्षक व परम सतगुरु, शांति, प्रेम, सुख-ज्ञान व आनंद के सागर शिवबाबा तो हम सबको कह रहे हैं, ''बच्चो,तुम्हें न केवल दूसरे के गुणों को देखना है वरन् दयालुता, नम्रता, कोमलता, निर्भयता, सहनशीलता, हर्षितमुखता, धैर्यता अंतर्मुखता, मधुरता, गम्भीरता और पवित्रता जैसे श्रेष्ठ दैवी गुणों को अपने जीवन में धारण करना है । इसके साथ ही ब्रह्मचर्य, सतसंग व शुद्ध अन्न को भी अपने योगी जीवन का आधार बनाना है तभी तो तुम बच्चे इस जन्म में सुख-शांति, पवित्रता का आनंद उठाओगे ही और भविष्य में तो श्रेष्ठ-से-श्रेष्ठ मनुष्यों से भी ऊंच महान् सर्वगुण सम्पन्न देवी-देवता बन जायेंगे । यानी कि इस पतित कलियुगी दुनिया के विनाश के बाद शीघ्र आने वाली सतयुगी दुनिया में विश्व महारानी श्रीलक्ष्मी व विश्व महाराजन श्री नारायण जैसे श्रेष्ठतम, देवी-देवता बन जायेंगे।

खुशी की बात है ऐसे कठिन समय में जबकि लोगों का चरित्र गिरता ही जा रहा है । सन् १९३७ में परमपिता परमात्मा शिव द्वारा ब्रह्मातन के माध्यम से स्थापित प्रजापिता ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्वविद्यालय सम्पूर्ण दुनिया में करीब १७०० शाखाओं द्वारा लोगों को दैवी गुण सम्पन्न बनाने में लगा हुआ है और उसकी श्रेष्ठता का प्रमाण है दैवी गुण सम्पन्न श्वेत वस्त्रधारी, अपनी धुन के पक्के, विश्वशांति के लिए कार्यरत ब्रह्माकुमारियों एवं कुमार । तो भाइयों,क्यों न हम भी ईश्वरीय विश्वविद्यालय में जायें व नित्य-प्रति दिये जा रहे ईश्वरीय ज्ञान एवं राजयोग की शिक्षा ग्रहण करें।

व्यक्ति व्यक्ति से ही तो समाज बना है । जब व्यक्ति ठीक होगा तो समाज व समस्त संसार स्वयंमेव ठीक हो जायेगा । ज़रा

(शेष पृष्ठ ११ पर)

बहुत गई थोड़ी रही, यह भी चली न जाए!

□ले.- ब्रह्माकुमारी चक्रधारी, दिल्ली

एक राजा के पास बहुत धन था, खजाने भरपूर थे परंतु राजा बहुत कंजूस था । उसने खजाने से कभी भी न किसी को दान दिया न ही किसी मेहनत करने वाले को खुश किया । कंजूसी में ही उसने अपने जीवन के बहुत दिन बिता दिये ।

एक दिन उसके नगर में एक नटी और नट ने आकर राजा के आगे आवेदन किया कि वह उनकी कला को देखे और उन्हें अपना नृत्य दिखाने का अवसर दे । राजा ने उत्तर में कहा—"किसी दिन देखेंगे।"

कई दिन बीत गये परंतु नट और नटी को राजा से कोई संदेश न मिला । आखिर वे मंत्री के पास गये और उन्होंने कहा—"हमें यहां ठहरे हुए कई दिन हो गये हैं परंतु महाराज से तो कोई संदेश मिला नहीं । या तो वे हमारी कला को देखें और या हमें आज्ञा दें ताकि हम अन्य कहीं अपनी कला का प्रदर्शन कर सकें और अपनी आजीविका का उपाय कर पायें।

मंत्री महोदय ने कहा कि वे शीघ्र ही इसका आयोजन करने का यत्न करेंगे । इसके बाद उन्होंने राजा को जाकर कहा—"महाराज, अगर इन नट और नटी को नृत्य का अवसर देकर कुछ पुरस्कार न दिया गया तो ये यहां से खाली लौटकर जहां-जहां, जिस-जिस राज्य में जायेंगे, वहां महाराज को बदनाम करेंगे । इसलिए आप इनका नृत्य तो देख लो । इनको पुरस्कार देने के लिए हम आपस में चंदा इकट्ठा कर लेंगे।"

राजा ने यह सोचकर कि उसका कुछ खर्च तो होगा नहीं, और वे मुफ्त में तमाशा भी देख लेंगे, अपकीर्ति से भी बच जायेंगे, वजीर को सभा का आयोजन करने की स्वीकृति दे दी ।

रात्रि को नट और नटी ने नृत्य दिखाना शुरू किया और नृत्य करते-करते आखिर रात गुज़रने को आ गई, परंतु राजा ने कोई पारितोषक न दिया । तब नट और नटी जो नृत्य करने के साथ गीत भी गा रहे थे, वे अपने गीत में कुछ पद बोल दिये । पहले नटी ने इशारे में नट से कहा—

रात घड़ी भर रह गई, थाके पिंजर पाय।
कहे नटी ऐ मालदेव, माधुरी ताल बजाय।।

इसके उत्तर में नट ने कहा—

बहुत गई थोड़ी रही, थोड़ी भी अब जाय।
नट कहे सुन नायिका ताल में भंग न आये।।

इस प्रकार नट और नटी ने तो एक-दूसरे को इशारा दे दिया । नटी ने कहा कि पांव थक गये हैं, रात गुज़रने पर आ गई है, अब कोई ऐसी माधुरी ताल बजाओ जो राजा खुश होकर कोई पारितोषक दे । नट ने कहा—ऐ नायिका, जो थोड़ा समय रह गया था, वह भी अब गुज़रने वाला है परंतु तुम ताल न भंग होने दो।

उनकी इस धुन को सुनकर एक फकीर जो कम्बल ओढ़े बैठा था, ने अपना कम्बल उतारकर नटी को दे दिया ।

इसके तुरंत बाद राजकुमार ने अपना सोने का रत्न जड़ित हार नट को भेंट किया ।

इसके बाद राजकुमारी ने अपनी रत्न जड़ित दोनों चूड़ियां उतारकर नटी को पुरस्कार रूप में दे दी।

यह देखकर राजा हैरान हो गया । उसने पहले फकीर से पूछा—"आपने कम्बल किस ख्याल से नटी को दिया।" फकीर ने उत्तर दिया—"महाराज, आपके विलासी जीवन को देखकर मेरे मन में भी विलासिता के संस्कार उत्पन्न हो रहे थे परंतु जब मैंने यह सुना कि बहुत गई अब थोड़ी की भी थोड़ी रह गई है, इससे मैंने विलासिता का विचार सदा के लिए छोड़ दिया है । इसलिए इनके एक पद से खुश होकर मैंने अपना कम्बल इन्हें इनाम में दे दिया।"

इसके बाद राजा ने यही प्रश्न राजकुमार से पूछा। उसने कहा कि मैं आपसे बहुत तंग था क्योंकि आप तो मुझे जेब खर्च भी नहीं देते । आखिर मैंने सोच रखा था कि आपको एक दिन जहर देकर मार डालूंगा । परंतु जब मैंने यह पद सुना तो सोचा कि आपकी बहुत आयु तो गुजर चुकी है और अब थोड़े दिन आप और जी लेंगे, वे भी दिन गुजर ही जाएंगे । इस प्रकार इनका यह पद सुनकर मैं पाप करने से और अपने माथे पर कलंक लेने से बच गया । इसी खुशी में मैंने अपना हार इनको दे दिया ।

फिर राजा ने राजकुमारी से पूछा कि उसने अपनी मूल्यवान चूड़ियां नटी को क्यों दी ? तब वह बोली—"महाराज मैं भी आपसे बहुत दुखी थी। मुझे ऐसे लगता था कि आप मेरे बारे में कुछ सोचते ही नहीं, आपको मेरे भविष्य की कुछ चिंता ही नहीं । आप अपना ही राज भोगने में व्यस्त हैं । मैंने सोच रखा था कि एक दिन मैं महल छोड़कर भाग जाऊंगी । यह पद सुनकर मैं गलत कर्म से बच गई, उसी खुशी में मैंने अपनी चूड़ियां नटी को दे दीं।

इन सभी के उत्तर को सुनकर राजा के मन में भी यह विचार आया कि सचमुच उसने धन का सदुपयोग नहीं किया और अब तो उसके जीवन के थोड़े ही दिन शेष रह गये हैं । उस दिन से लेकर उसने दान वृत्ति, त्याग वृत्ति और उदारता का गुण अपना लिया और वह केवल उस नगर का राजा न होकर लोगों के मन का राजा बन गया।

इस छोटी-सी कहानी से हम तीन शिक्षाएं धारण कर सकते हैं । एक तो यह कि अब जबकि हमें सृष्टि ड्रामा को जानने से अथवा सत, त्रेता, द्वापर, कलियुग और संगम युग के चक्र को समझने से यह मालूम हो गया कि बहुत बीत गया, अब थोड़ा समय रह गया है। और यह भी अब खत्म होने वाला है तो हमें केवल धन-शक्ति को ही नहीं बल्कि अपनी अन्य शक्तियों के खज़ाने को भी मानव-कल्याणार्थ ईश्वरीय सेवा में लगाना चाहिए

दूसरी शिक्षा हम यह धारण कर सकते हैं कि जैसे नट और नटी के पदों से हरेक ने अपने अशुद्ध संकल्प का निवारण किया और शुभ मार्ग को अपनाया । वैसे ही हमें भी नटराज शिवबाबा के हर महावाक्य से अपने जीवन के अशुद्ध संकल्पों का निवारण कर शुद्ध विचारों (Positive Thinking) को अपनाना चाहिए ।

तीसरा हमें यह याद रखना चाहिए कि जैसे यह जानने से कि अब थोड़े का भी थोड़ा समय शेष रह गया है, फकीर, राजकुमार, राजकुमारी और राजा—चारों के जीवन में परिवर्तन आया था । वैसे ही हमें भी अपने जीवन में परिवर्तन की प्रक्रिया को जारी रखने के लिए यह याद रखना चाहिए कि अब बहुत थोड़ा समय शेष रह गया है। □□□

बरनाला आध्यात्मिक संग्रहालय देखने के लिए न्यायाधीश एम.आर. बत्रा जी पधारे थे। ब्र.कु. स्वदर्शन उनको चित्रों की व्याख्या कर रही हैं ।

चम्बा में एक आध्यात्मिक प्रदर्शनी में पधारे हुए भाइयों को भ्राता अवधेश जी समझा रहे हैं ।

कोडंगल ब्रह्मोत्सव के संदर्भ में चित्र-प्रदर्शनी का उद्घाटन के अवसर पर स्थानीय मंडलाध्यक्ष भ्राता रतनलाल को बी.के. पद्म सौगात देते हुए।

नारनौल में आध्यात्मिक प्रदर्शनी का उद्घाटन करते हुए नारनौल के एम.डी.एम. भ्राता विमलचंद जी । साथ में अन्य भाई-बहन खड़े हैं ।

समय और जीवन

□ब्र.कु. 'प्रकाश', भोपाल

समय का चक्र सतत गतिशील एवं परिवर्तनशील है। समय आयामित होते हुए भी अविरल व अविनाशी होता है। उसकी अपनी पृथक लाक्षणिकता व अभिन्नता है । मनुष्य की जीवन-रूपी यात्रा समय से सदा प्रभावित रही है। वस्तुत: समय व जीवन का परस्पर गहन संबंध है।

समय जीवन का वह मार्ग है जिसके अनुरूप चलकर मंजिल प्राप्त हो सकती है। परंतु समय उनका साथ कभी नहीं देता जो समय के साथ नहीं चलते ।

१. **समय की अर्थपूर्णता**—'समय' स्वयं में पूर्ण है। सक्षम व क्रियाशील हैं। समय स्वयं निराधार है परंतु सृष्टि की आमूल घटनाएं, कृतियां एवं संस्कृतियां सब-कुछ समय पर आधारित हैं । जीवन की विविध विधाओं में सफलता की प्राप्ति समय योग से ही होती है। इस प्रकार समय का अंतराल ही जीवन में नई-नई खोज, प्रगति, परिवर्तन व आनंद का मूलजनक है।

समय की सार्थक अभिव्यंजना हेतु समय शब्द का विग्रह निम्नानुसार किया जा सकता है—(स म य) स सतातन, सत्य, समर्थ । म महान । य यथार्थ यत्न । अर्थात् समय की शक्ति को जानने वाला व्यक्ति समय के साथ सतत यत्नशील रहता है तथा वह दुख-सुख में समान रहकर सदा सम्पन्नता का अनुभव करता हुआ जीवन की यथार्थता को प्राप्त कर लेता है।

२. **समय अमूल्य निधि है**—प्राय: यही कहा जाता है कि time is money or time is gold परंतु यदि सूक्ष्मता से विचार करें तो समय की कीमत स्थूल धन से भी आंकी नहीं जा सकती क्योंकि धन-दौलत, सोना-चांदी पुन: अर्जित किये जा सकते हैं, परंतु एक बार खोया समय जीवन में दुबारा, कभी वापस नहीं आता । वस्तुत: समय पर यत्न करने व समय के महत्व को समझने पर ही मनुष्य धन, ऐश्वर्य, मान-शान और ऊंचे पद की प्राप्ति कर पाता है । अतएव यह कहना उचित होगा कि समय एक अनमोल व दुर्लभ रत्न है जिससे जीवन का श्रृंगार होता है परंतु इस आभूषण को जीवन में दुबारा कोई नहीं पहन पाता।

३. **समय बलवान है (time is powerful)** संसार में मनुष्य जीवन भर अपने पौरुष धन-दौलत व शान-शौकत के नशे में चूर स्वयं को सबसे बड़ा बलवान समझता है यहां तक कि ईश्वर को भी वह खिलौना समझने लग पड़ता है। परंतु जब उसका बुरा समय आ जाता है तो धन-दौलत कोई साथ नहीं देते । मृत्यु काल में तो स्वयं का शरीर भी साथ छोड़ देता है। मूल्यवान औषधियां भी काम नहीं करतीं क्योंकि तब समय हाथ से जा चुका होता है फिर तो यही कहना पड़ता है कि "समय बलवान है ।" समय जीवनपथ की तपस्या की कसौटी है तथा वह कठिन परीक्षा है जिसे उत्तीर्ण करना ही पड़ता है। उदाहरणार्थ सत्य पर अटल राजा हरिश्चंद्र को अपने ही पुत्र की मृत्यु का कर अपनी पत्नी से लेना पड़ा तथा मीरा को प्रभु प्रीत में जहर का प्याला पीना पड़ा।

४. **समय जीवन की सीमा है (Time is limit of the life)** मनुष्य के जीवन में खाने-पीने, उठने-बैठने सोने से लेकर हर एक कार्य समय पर ही करना शोभनीय लगता है । समय पर बीज बोना, समय पर व्यापार करना आदि प्रत्येक कर्म समयानुसार करने पर ही शुभ फलदायक होता है । अन्यथा परिश्रम बेकार हो जाता है। समय की सीमा से पार जाने पर अनेक खतरे हैं जैसे—समय के बाद जाने से गाड़ी छूट जाती है, मरीज मर जाता है, एक क्षण की असावधानी से दुर्घटना घट जाती है। वस्तुत: यह कहना यथोचित होगा कि मनुष्य का सारा जीवन समय रूपी मर्यादा की सीमा में बंधा हुआ है। जिसका उल्लंघन उसके लिए सर्वथा हानिकारक व अशुभ सिद्ध होता है। इस प्रकार समय में आस्था ही जीवन मर्यादा का पालन है।

५. **समय ही जीवन का आधार एवं विस्तार है**—मनुष्य का जीवन जन्म से इहलीला की समाप्ति तक समय से निर्मित होता है,उसके जीवन का हर क्षण महत्वपूर्ण होता है । कुछ क्षण जीवन में आमूल परिवर्तन करने वाले तथा अविस्मरणीय होते हैं । सिर्फ अच्छे क्षण ही नहीं बुरे क्षण भी मनुष्य को बहुत बड़ी सीख देकर जाते हैं । एक उपलब्धि बन जाते हैं, इसीलिए कहा भी गया है—"The adversities are our good friends" अर्थात् "बुरे दिन हमारे बहुत अच्छे

मित्र हैं" । अत: मनुष्य को हर अगले क्षण का खुले हृदय से स्वागत करना चाहिए चाहे वह समय अच्छा हो या बुरा हो । हर क्षण व्यतीत होने पर आने वाला अगला क्षण बताता है कि हमने क्या खोया और क्या पाया है ! इस प्रकार यदि देखें तो जो समय को जितना सार्थक करता जाता है उसके जीवन में उपलब्धियों का उतना ही विस्तार होता चला जाता है।

६. समय आदि से अब तक बदलता ही गया है—समय का दूसरा नाम काल या युग है । तथा ऐतिहासिक व पौराणिक तथ्य इस बात की सूचना देते हैं कि सृष्टि पर काल अथवा युग का परिवर्तन होता ही रहा है। वर्तमान समय को आधुनिक युग कहा जाता है परंतु यदि वास्तविकता पर विचार करें तो पूर्व का समय कई अर्थों में आज से लाखों गुना बेहतर था । गीता-बाईबिल आदि का संकेत भी यही है कि ईसा से ३००० वर्ष पूर्व सारा भारत स्वर्ग (Heaven Paradise) था, अर्थात् वह काल स्वर्ण काल(Golden era) या सतयुग था । वहां सम्पूर्ण सुख-शांति, पवित्रता, संतोष व मतैक्यता थी । सारा विश्व एक परिवार था । पशु भी अहिंसक थे । यही स्थिति त्रेतायुग में भी थी ।

तत्पश्चात् मध्य युग द्वापर आया । यद्यपि यह दैवी संस्कृति के पराभव का प्रारम्भ बिंदु, अर्थात् वैचारिक विवर्तन का युग (Era of thought diversion) माना जाता है । तथापि इस काल में सहकारात्मक जीवनयापन शैली, अटूट व नि:स्वार्थ धार्मिक आस्था, न्यायप्रियता, सत्यता व शालीनता का साक्षात्कार होता है । इस प्रकार मध्यकाल के सापेक्ष ३००० वर्ष ईसा से पूर्व की स्थिति को स्वर्ग कहना अन्यथा न होकर यथार्थ व तर्कसंगत है। तथाकथित मध्यकाल भक्ति से ओतप्रोत था, जहां विक्रमादित्य का न्याय विश्व प्रसिद्ध था, हरिश्चंद्र ने सत्य पर सर्वस्व न्यौछावर कर दिया था, राजा भोज के शासनकाल में लोग ताले नहीं लगाते थे । यह सत्य बातें आज आश्चर्यान्वित कर देती हैं, अथवा प्रतिभासी लगती हैं । कारण कि वर्तमान युग में मनुष्य ने भले ही वैज्ञानिक साधन जुटा लिए हैं परंतु उसका राजनैतिक, धार्मिक व नैतिक अधोपतन चरम बिंदु पर है । आपसी मतभेद, साम्प्रदायिकता, ईर्ष्या, द्वेष, तनाव व दुख अशांति ने हर मानव मन को घेर रखा है । कुल मिलाकर वर्तमान युगीन जन-जीवन, निराशा, कुण्ठा, अप्राप्ति एवं असमायिक विनाश के भयावह दौर से गुज़र रहा है । इस कलहयुगी समयाघात से पंगु हुआ मानव शून्य में जीवन की तलाश कर रहा है। वह अपनी आध्यात्मिक शक्ति व उसके स्रोत परमात्मा को भूल चुका है । एतदनुसार यथार्थ में यह समय गीता में वर्णित धर्मग्लानि का समय (Time of irreligiousness) है।

७. समय के मूल्य को जानकर जीवन हीरे तुल्य बनाइए—जैसा कि ऊपर स्पष्ट किया जा चुका है कि वर्तमान समय धर्मग्लानि का समय है । परंतु इस विषम समय में भयभीत विचलित होने के स्थान पर हमें इस समय को प्रभु-साधना में सफल कर जीवन हीरे तुल्य बनाना चाहिए । क्योंकि यह युग गीता के अनुसार कल्याणकारी पुरुषोत्तम संगम युग (Auspicious era or confluence age) है। जिस समय परमात्मा सत्य ज्ञान व राजयोग की शिक्षा द्वारा सृष्टि परिवर्तन व सत्य धर्म की स्थापना का दिव्य कर्तव्य कर रहे हैं । कहा जाता है कि इतिहास का पुनरावर्तन होता है (History must repeat)।

अतएव तदनुसार ही स्वयं परमात्मा सृष्टि पर पुन: अवतरित होकर प्रजापिता ब्रह्मा के साकार माध्यम से हमें समय चक्र अर्थात् सृष्टि-चक्र के आदि मध्य-अंत का ज्ञान दे रहे हैं । वर्तमान समय सृष्टि की पुनर्स्थापना का हीरे तुल्य युग है। इस समय का ही गायन है कि परमात्मा कौड़ी से हीरा बना देते हैं । साथ ही यह भी उक्ति प्रसिद्ध है कि काल करे तो आज कर, आज करे सो अब... पल में प्रलय होयगी.... कर न सकोगे तब । अत: हमें शीघ्र ही जागृत हो अपने कर्मों को श्रेष्ठ बनाने व पुण्य की कमाई करने में लग जाना चाहिए । वरना प्रलय तो अति निकट है ही । फिर पश्चाताप के सिवा कुछ नहीं मिलेगा ।

उपरोक्त वर्णन में स्पष्ट किया गया है कि सफलता में समय का ही महत्व है । अतएव वर्तमान समय पद्म गुना प्राप्ति करने का अमूल्य समय है तथा वर्तमान युग का यही संकेत है कि अब गफलत में सोने, खाने-पीने अथवा भोग-वासनाओं में व्यर्थ शक्ति गंवाने का समय नहीं है । वरन् सत्य ज्ञान व राजयोग द्वारा अनेक जन्मों का श्रेष्ठतम भाग्य प्राप्त करने व संस्कार परिवर्तन द्वारा सृष्टि परिवर्तन करने का यह हीरे तुल्य समय है ।

पोरसा में सिंधिया स्कूल के बच्चों को चरित्र-निर्माण का महत्व समझाते हुए ब्र.कु. श्रीलाल जी।

अविनाशी खुशी- अनमोल खजाना

□ब्र.कु. आत्मप्रकाश, देहली

सृष्टिचक्र के आदिकाल सतयुग में जब हर मनुष्यात्मा पावन थी तो खुशी के खज़ाने से सम्पन्न थी। हरेक के मन की खुशहाली से जीवन रूपी बगिया में अनोखी हरियाली थी। सभी की मनोदशा प्रसन्नचित्त, स्फूर्तियुक्त व आशावान थी। लेकिन द्वापर युग में प्रवेश करते ही देह-अभिमान के पिंजरे में फंसने से माया की गुलाम बन गई। धीरे-धीरे राम के घने बादल मंडराते देखते हुए भयभीत होकर उदासीनता की शिकार बन गई। उदासीनता से मन बहुत खिन्न होता गया, जिससे अंदर मायूसी, आत्महीनता, लाचारी, ग्लानि-भाव आदि की महसूसता होने लगी। सभी के मानसिक विकृति को देखकर रहमदिल परमात्मा ने आकर 'मनमनाभव' महामंत्र के जादू से आत्माओं को अविनाशी खुशी का खज़ाना प्रदान किया। जिससे सभी दिल से गीत गाने लगे—"खुशियों भरी ज़िंदगानी हमारी, देवी-देवताओं से भी है वो प्यारी।"

खुशी जैसी खुराक नहीं ?

वास्तव में खुशी ही आत्मा की सर्वोत्तम खुराक है। क्योंकि जब मन अथाह खुश होता है तब मन में शुद्ध और शक्तिशाली संकल्प उत्पन्न होते हैं। फलस्वरूप वैसे ही बोल व कर्म होते हैं। तो आत्मा स्वयं को शक्तिवान महसूस करने लगती है। इसके विपरीत कहा जाता है—गम जैसा रोग नहीं, क्योंकि गम अनेक मानसिक रोगों को जन्म देता है।

गम हमें रावण की बेगम बनाता है

जब किसी कारण से खुशी गुम हो जाती है तो मन पर ग़म छा जाता है। उस समय ग़म, गम (gum) का कार्य करता है अर्थात् ग़म रावण को अपने विकारों रूपी सेना सहित अपने तरफ खींच लेता है। तब रावण अपने साम्राज्य से आत्मा को अधीन करके अपनी बेगम बनाता है। आत्मा पूर्णतया रावण की मत पर चलने लगती है।

संगम युग में खुशी गायब होना अभिशाप है

वास्तव में संगम युग है ही खुशियों का युग। इस युग में परमात्मा के प्राप्ति के साथ शांति, शक्ति और गुणों के अखुट खज़ानों की प्राप्ति होती है। इन सभी खज़ानों को पाने का आधार है खुशी का खज़ाना। अगर खुशी गुम हो जाती है तो मानो सभी खज़ाने पाने से वंचित रहते हैं। इसलिए इस भाग्य निर्माण काल में माया खुशी गुम करके हमें श्रापित करती है।

अगर न होगी खुशी, तो होगी जरूर खांसी

जब आत्मा बेहद खुशी में होती है तो दिल में 'वाह रे मैं' 'वाह मेरा पार्ट' के गीत गाती है। लेकिन कभी धोखेबाज़ माया (मासी) धोखा देकर गले में फांसी डालती है। तो आत्मा खांसते हुए दर्द भरे स्वर में 'हाय रे मैं', 'हाय मेरी फूटी तकदीर' कहके चिल्लाती रहती है। फिर तंग होकर कभी-कभी माया के रंग में रंग जाती है।

खुशी गुम क्यों होती ?

माया खुशी को गुम करके हमें गुमराह कर देती है जिससे यह सुखद ईश्वरीय पथ जो स्वयं ईश्वर द्वारा प्रशस्त पथ है वह जटिल तथा संघर्षमय अनुभव होता है। पुरुषार्थी को मन-खुश से मनहूस बनाने वाले कुछेक कारण निम्नलिखित हैं—

i) माया के आकर्षण में फंसने से

वास्तव में माया के रूप जाल में मकड़ी की तरह फंसना महामूर्खता है। लेकिन माया चतुराई से बुद्धिवानों को भी बुद्धु बनाकर अपने झूठे आकर्षणों में लटकाकर फटकारती रहती है अर्थात् मायावी आकर्षण मनुष्य को आत्माभिमानी से देह-अभिमानी बना देता है, फलस्वरूप वह कोई-न-कोई विकर्म करके अपनी खुशी को लम्बे काल के लिए गुम कर देता है।

ii) किसी को मनसा, वाचा, कर्मणा दुख देने से

जो दूसरों की मनसा, वाचा या कर्मणा से दुख पहुंचाते हैं, वो भला खुश कैसे रहेंगे ? अहंकारवश दूसरों को कटुवचन के तीर से घायल करने वालों को खुशी कैसे मिलेगी ! कटुवचन की हिंसा तो अतिघातक है क्योंकि कटुवचन की बोली की गोली सदा के लिए घायल कर देती है। ऐसा व्यक्ति कभी भी सच्चे सुख का अधिकारी नहीं बन सकता। ऐसे ही जब हम दूसरों के प्रति अशुभ सोचते हैं तो वह अशुभ संकल्प उस आत्मा पर टकराकर दुख पहुंचाते हैं, पुनः वो अपने तरफ वापस आकर हमारी खुशी गुम कर देते हैं।

iii) अवगुणग्राही दृष्टि रखने से

सदा दूसरों के अवगुण रूपी किचड़े के प्रति सोचने वाला, वर्णन करने वाला या ग्रहण करने वाला अर्थात् बगुला वृत्ति वाला भला कैसे सदा खुश रह सकेगा ? इसके विपरीत सदा गुणग्राही अर्थात् हंस वृत्ति वाला सदा हर्षित मुख रहकर खुशी में नाचता रहेगा।

iv) पिछले जन्मों के विकर्मों के बोझ से

कभी चलते-चलते बिना किसी कारण हमारी खुशी गायब हो जाती है, क्योंकि पिछले जन्मों में किया हुआ कोई कड़ा विकर्म हमारी खुशी छीन लेता है । वैसे भी जन्म-जन्म के भयंकर पापों से दबी आत्मा भला सदा खुशी का अनुभव कैसे कर सकेगी ? इस बोझ को ढोने में ही उसकी सारी शक्ति व्यय हो जाती है। अत: यह बोझ हल्का हो तो खुशी रहे।

सदा खुशी में कैसे रहें ?

जब व्यक्ति उदास रहता है, तो आत्मग्लानि और आत्म-प्रताड़ना के भाव मन को आक्रांत करते हैं । हर वक्त थकान बनी रहती है जिससे कार्यक्षमता क्षीण होने लगती है । इसलिए मन दुरूस्त और तन दुरूस्त रहने के लिए सदा खुशी में रहना परमावश्यक है । पुरुषार्थियों को निम्नलिखित बातों पर अभ्यास करने से सुनिश्चित अविनाशी खुशी प्राप्त होगी।

''आत्म-अभिमानी भव'' खुशी के खज़ाने को पाने की चाबी है

इस अनोखी चाबी को खोने से ही हमने खुशी का खज़ाना खोया । जब हम आत्मिक स्थिति में स्थित होते हैं तो यह पुरानी पतित देह और देह की दुनिया को भूलकर अपने स्वधर्म, स्वदेश तथा स्वपिता की स्मृति में स्वत: टिक जाते हैं । जिससे निजी गुणों की अनुभूति होकर आनंदमय स्थिति की अनुभूति होने लगती है । तो आत्मा बेहद खुशी का अनुभव करने लगती है।

सदा याद रहे—**''जितना रहेंगे देह से न्यारा, उतना चढ़ेगा खुशी का पारा''**

पवित्रता के बल को बढ़ाते रहें

पवित्र मन सदा खुशी का अनुभव करता है । अपवित्रता की धूल खुशी को ढक देती है । सूक्ष्म अपवित्रता के कारण मानसिक तनाव बना रहता है । अपवित्रता ईश्वरीय आज्ञा के प्रतिकूल है। इसलिए ईश्वरीय आज्ञा तोड़ने वाला भला सदा खुशी में रह सकता है? पवित्र मन में सदा शुद्ध तथा महान संकल्पों का प्रवाह रहता है।

सदा ईश्वरीय नशे में रहें

सदा ईश्वरीय नशे में डूबे रहने से चित्त की वृत्तियां शांत हो जाती हैं, मन अति हल्का रहता है । यह अलौकिक नशा इस दुखदाई दुनिया की सुधबुध भुलाकर अविनाशी खुशी प्रदान करता है । शिवबाबा कहते हैं—

" हे ब्रह्मावत्सो—''जरा अपने भाग्य व मनुष्य के भाग्य की तुलना करके देखो तो तुम्हारी खुशी आसमान छूने लगेगी । तुम्हारी खुशी जग के गम मिटाने वाली है, इसलिए किन्हीं भी कारणों से अपनी खुशी को गम में नहीं बदलो।''

सदा नशा रहे कि—भगवान से हमारा सम्पर्क है, हमारा ये जीवन उसकी छत्रछाया में पल रहा है । हमारे जीवन से दुख के काले बादल भस्म हो गए... अब हमारा जीवन फूलों की तरह खिलने लगा है, तो सदा खुशी रहेगी।

विचार सागर मंथन करते रहें

विचार सागर मंथन से खुशी रूपी मक्खन मिलता है। मंथन करने वाला सदा ज्ञान सागर में डुबकियां लगाकर ज्ञान-रत्नों की भर-भरके थालियां प्राप्त करता रहता है जिससे उसे सदा अथाह खुशी रहती है। वैसे भी चिंतन हमारी चिंताओं को हर लेता है। चिंतन के बिना व्यर्थ प्रवेश करके खुशी नष्ट कर देता है। इसलिए सदा खुशी में रहने के लिए श्रेष्ठ चिंतन पर चलना परमावश्यक है।

कर्म करते समय हल्का रहना सीखें

कर्म करते समय मन पर जरा भी बोझ न हो । कर्म की जिम्मेवारी प्रभु को अर्पण करके स्वयं सदा हल्के रहें । कर्म के प्रभाव से भी मुक्त रहने का अभ्यास करें । कर्म करते समय हल्के रहना यह भी एक कला है, यह कला ही हमें कर्मयोगी बनाती है। Duty को Dance अनुभव करें तो स्वत: सदा खुशी रहेगी।

मन रूपी मंदिर में मन के मीत को बसाएं

मन रूपी मंदिर में खुशियों का दाता प्रभु बसा होगा तो मन सदा खुशियों के खजाने से भरपूर रहेगा । प्रभु की दिल से महिमा करके महिमा के फूलों की माला बनाकर उन्हें पहनाते रहें । मन यदि उस परममीत से खाली कर देंगे तो उसमें खुशी नष्ट करने वाला शैतान आ बैठेगा ।

सदा खुशी में रहने से

i) बुद्धि सदा फ्रेश रहती है

जब मन खुश होता है तो बुद्धि सदा फ्रेश रहती है। फ्रेश बुद्धि सदा Active और Alert रहती है जिससे वह ठीक-ठीक काम करती है, ठीक निर्णय लेती है, फलस्वरूप जीवन कहीं उलझता नहीं । जीवन में निराशा नहीं आती और परेशानी समाप्त हो जाती है।

ii) उमंग और उत्साह के पंख मिलते हैं

जब अथाह खुशी होती है तो आत्मा को उमंग और उत्साह के पंख प्राप्त होते हैं जिससे वह उड़ता पंछी बन परमधाम की ओर उड़ान भरकर सदा परमात्मा की याद की गोद में समाया रहता है । उड़ती कला में सदा उड़ता और उड़ाता रहता है । सदा खुश रहने वाला मन ही ''मनमनाभव'' के महामंत्र का अजपाजाप करके परमात्मा से सभी खज़ाने पाकर तेजी-से सम्पन्नता की ओर अग्रसर होता है।

iii) खुशनुमा चेहरे से खुशी का महादान

खुशनुमा चेहरा अर्थात् खुशी के खज़ाने से सम्पन्न चेहरा, दिव्य गुणों से सजा-सजाया चेहरा । यही दिव्यता से हरा-भरा चेहरा दूसरों के गम मिटाकर खुशी से मन की कली खिला देता है । इस प्रकार सदा खुश रहना भी बड़ी भारी सेवा है। उनकी खुशी की लहर वायुमंडल को भी परिवर्तन करती है। आज इस खुशी की आवश्यकता सबको है और ऐसा महादान करना अति पुण्य का कार्य है । सचमुच ऐसी गुप्त सेवा करने वाले ही खुशनसीब हैं क्योंकि उन्हों के भाग्य की महिमा स्वयं भगवान भी करते हैं । उन्हें देखकर दूसरे भी ईश्वर की ओर आकर्षित होते हैं । इसलिए सदा याद रहे—

''जितना खुशी का पारा, उतना भगवान का प्यारा''

खुशी के खज़ाने वाले अतीन्द्रिय सुख के झूले में झूलते हैं

सदा खुशी में रहना यह माया के बंधनों से निर्बंधन तथा विकर्मा जीत बनने की निशानी है। क्योंकि जिसने अपने मन को साध लिया, उसे इस दुनिया की कोई भी शक्ति विचलित नहीं कर सकती । ऐसे विजयी आत्माओं का बुद्धि रूपी झंडा इस साकारी दुनिया से ऊंचा खुशी में लहराता रहता है । ऐसे सदा कापारी खुशी में झूमने वाले ही अतीन्द्रिय सुख के झूले में झूलते और झूलाते रहते हैं ।

खुशी का भंडार सदा भरपूर रहे

भगवान को पाकर और सत्य ज्ञान को पाकर, स्वर्ग के पासपोर्ट को पाकर हमारा जीवन खुशियों का भंडार बन गया । अब आने वाले विकराल काल में हम इस भंडार से खुशियां बांट-बांटकर सभी की जीवन यात्रा सरल कर सकेंगे । और हमारा यह भंडार भरता जाएगा और अविनाशी बनता रहेगा। □

पादरा तालुका के सरपंचों के स्नेह मिलन में जिला पंचायत के प्रमुख भ्राता जगदीश भाई, जिला कलेक्टर भ्राता दवे जी नगरपालिका के प्रमुख भ्राता अंबू भाई पटेल आदि बैठे हैं ।

आरिपदा सेवाकेंद्र की ओर से वहां के ल.ना. के मंदिर में आध्यात्मिक प्रवचन रखा गया था । ब्र.कु. बहनें प्रवचन कर रही हैं । साथ में अन्य भाई-बहन बैठे हैं ।

राजौर (कुरुक्षेत्र) में मानव-कल्याण आध्यात्मिक सम्मेलन में भ्राता सत्यप्रकाश बंसल जी अपने विचार प्रकट कर रहे हैं ।

शान्ति की ओर

जीवन को पवित्र और महान बनाने में दिव्य गुणों का महत्वपूर्ण स्थान है । परंतु कुछ दिव्य गुण ऐसे हैं जिनका सम्बन्ध मनुष्य के मन की शांति से है । उसके बिना जीवन में शांति को प्राप्त करना लगभग असंभव-सा ही है। संतोष, मधुरता, सहनशीलता, धीरज और नम्रता ऐसे गुण हैं कि जिनके बिना शांति की कल्पना करना भी असंभव-सा लगता है । परंतु प्रश्न उठता है कि इन गुणों को हम जीवन में कैसे धारण करें ?

'संतोष' की धारणा

संतोष अथवा संतुष्टता अशांति-निवारण का अमोघ उपाय है। मनुष्य को सोचना चाहिए कि उसे जो कुछ भी उपलब्ध है और जो कुछ नहीं भी उपलब्ध है, वह सब पूर्वकालीन अथवा वर्तमान के कर्मों का ही फल है । जब हमारे अपने ही कर्म हमारी प्राप्ति का साधन और अप्राप्ति का कारण हैं तो फिर असंतुष्टता से क्या लाभ ? अगर किसी उपलब्धि की कमी है तो उसका उपाय पुरुषार्थ है न कि असंतुष्टता।

दूसरी बात यह है कि अगर मनुष्य के पास किसी एक चीज़ की कमी है और वह उसे पूरा नहीं कर सकता तो वह किसी दूसरे प्रकार की उपलब्धि का यत्न करके आगे बढ़े । उदाहरण के तौर पर अगर किसी के पास धन-सम्पदा नहीं तो उसे चाहिए कि ज्ञान-धन को अर्जित करे ताकि उसके जीवन में संतुष्टता आए । अगर किसी मनुष्य की वृद्ध अवस्था है और उसमें युवकों जैसा बल नहीं तो वह योग बल अर्जित करे। पवित्रता के बल का संचय करे । ज्ञान बल से आत्मा को बलवान बनाये। उससे उसके मन में यह सोचकर संतुष्टता आएगी कि अगर उसके पास वो सम्पत्ति नहीं, दैवी सम्पत्ति तो है और फिर उसके मन में शांति आएगी।

मधुरता

कटु बोलने से स्वयं भी मनुष्य अशांत होता है, दूसरों को भी अशांत करता है । मधुर बोल से सम्बंध मधुर होते हैं । किसी अशांत व्यक्ति को भी मधुर बोल से शांत किया जा सकता है । कटु वचनों से तो आग और भड़कती है । अत: यह सोचकर कि मधुरता ही शांति की पताका है और विजय की दुंदुभी है, मनुष्य को मधुरता से पीछे नहीं हटना चाहिए । जहां मधुरता है, वहां शांति है।

सहनशीलता

थोड़ी देर की सहनशीलता से मनुष्य लम्बे समय की वेदना से और पश्चात्ताप की अग्नि से बच जाता है । सहनशीलता दूसरे के क्रोध का शमन करने वाली है और निजात्मा के बल को बढ़ाने वाली है । जैसे शारीरिक रूप से बलवान व्यक्ति ही प्रहार को सहन कर सकता है, वैसे ही आत्मा पर अपमान, विरोध तथा कठिनाइयों के प्रहारों को सहन करना आत्मा के बलवान होने का सूचक है । ऐसा मानकर चुप रहना ही सहनशीलता की ओर बढ़ना है और अपने बल का विकास करना है । क्योंकि सहन न करने से मन, वचन, कर्म में दोष प्रगट होते हैं । 'सहन करना महान बनना है।' ऐसा सोचकर सहन करने का यत्न करना चाहिए । यह गुण मनुष्य को शांति की ओर अग्रसर करता है।

धैर्य

प्रतिकूल परिस्थितियों में धीरज खो देने से मनुष्य अपने मन की शांति से भी हाथ धो बैठता है । उस समय उसका विवेक भी ठीक से काम नहीं करता और वह सही निर्णय भी नहीं कर पाता । निर्णय सही न होने से गलत कर्म हो जाता है और उससे उसकी मन की अशांति और बढ़ती है । इसलिए कहा ही गया है कि धीरज की तो परीक्षा ही आपतकाल में होती है। धीरज रूपी सद्गुण की धारणा के लिए मनुष्य को याद रखना चाहिए कि पहले परिस्थितियां मेरे अनुकूल थीं, अब प्रतिकूल हुई हैं । ये दिन भी बीत जाएंगे क्योंकि सब दिन होत न एक समान। अब प्रतिकूल परिस्थितियों का मुझे डटकर मुकाबला करना है । इस प्रकार अपने मन का संतुलन बनाये रखने से वह व्यक्ति सोच-समझकर कदम उठाता हुआ शीघ्र ही सफलता को प्राप्त होता है। और उससे उसकी शांति और खुशी और बढ़ जाती है।

नम्रता भी एक ऐसा ही दिव्य गुण है जो हमें शांति के पथ पर ले जाता है । नम्र-चित्त व्यक्ति सहज ही सर्व का प्रिय बन जाता है। उसके प्रति सर्व की शुभाशीष मन से निकलती है। सर्व की श्रेष्ठ भावनाओं के प्रभाव के कारण उसके जीवन में शांति बनी रहती है। अहंकारी और कठोर स्वभाव वाले व्यक्ति से सब बात करने में भी कतराते हैं—अत: ऐसा जानकर हमें अपने जीवन में नम्रता का गुण धारण करने का पुरुषार्थ करना चाहिए ।

दिव्य गुण तो सभी अनमोल हैं परंतु आज के इस युग में जबकि सभी को शांति की तलाश है, तो विशेष रूप से इन गुणों को धारण करने का प्रयास हमें शांति का अनुभव कराने में सहायक होगा। □

□ले-.ब्र.कु. सुधा, शक्ति नगर देहली

धर्म और कर्म

★

'मनुष्य के लिए धर्म की आवश्यकता है या नहीं; 'क्या धर्म का कर्म के साथ कोई सम्बन्ध है' तथा 'मनुष्य के कर्म कैसे होने चाहिएँ ?'—इन तीन प्रश्नों पर संसार में मुद्दत से बहुत ही मतभेद चला आ रहा है।

साम्यवाद के आदि-वक्ता कार्ल मार्क्स, जिन्होंने इतिहास की भौतिकवादी व्याख्या की, का कथन है कि धर्म एक प्रकार की अफ़ीम है जिसके परिणाम-स्वरूप धर्मवादियों में अकर्मण्यता तथा भाग्य-वादिता देखने में आती है। इसके विपरीत, वर्त्तमान् काल के अति विख्यात इतिहासकार अर्नोल्ड टायनबी (Arnold Toynbee) जिन्होंने इतिहास पर कई ग्रन्थ लिखे हैं, का कहना है कि धर्म ही संसार के इतिहास की धुरी रहा है। और, गीता के भगवान् ने तो धर्म को यहाँ तक महत्त्व दिया है कि उनका वचन है कि धर्म की पुनर्स्थापना के लिए तो वे परमधाम को छोड़कर स्वयं धरती पर आते हैं। अवश्य धर्म के लक्षण अथवा स्वरूप के बारे में कुछ विषमता है। अतः पहले यह समझना ज़रूरी है कि 'धर्म क्या है ?

धर्म और उसके अंग

संसार में जितने भी धर्म हैं, उनका एक मुख्य उद्देश्य मनुष्य के चरित्र का उत्थान है। अतः धर्म का एक मुख्य अंग आचार-संहिता है। 'धर्म' शब्द का अर्थ 'धारणा' है; धर्म हमें जीवन के लिए कुछ उच्च धारणायें देता है। उन धारणाओं के फलस्वरूप मनुष्य का जीवन पतित नहीं होता है। धर्म हमें बुराइयों से बचकर रहने की शिक्षा देता है। अतः धर्म-ज्ञान का एक बहुत बड़ा भाग नैतिक शिक्षा, चारित्रिक शिक्षा अथवा विधि-निषेध (Do's and Dont's) है। अहिंसा, सत्य, ब्रह्मचर्य, अक्रोध इत्यादि इसी के अन्तर्गत हैं।

नैतिक एवं चारित्रिक मूल्य

हरेक धर्म में इनका उल्लेख है। परन्तु, एक धर्म और दूसरे धर्म में इनकी कलाओं (Degrees) का अन्तर है। उदाहरण के तौर पर कोई धर्म हरेक परिस्थिति में, पूर्ण रूपेण अहिंसा का पालन सिखाता है, अन्य कोई केवल अनावश्यक हिंसा से बचे रहने को 'अहिंसा' मानता है। एक धर्म अधिकाधिक तीन-चार विवाह कर लेने की स्वीकृति देता है, परन्तु पर-स्त्री-गमन अथवा व्यभिचार के लिए निशेध करता है; उसके लिए वही ब्रह्मचर्य हैं; अन्य धर्म २५ वर्ष तक अविवाहित जीवन में कौमार्य व्रत के पालन को ब्रह्मचर्य मानता है। तीसरा, गृहस्थ में एक नारी के नियम को भी ब्रह्मचर्य बता रहा है और चौथा ब्रह्म में बुद्धि को स्थित रखते हुए अपनी चर्या चलाने पर ज़ोर देता है; वह इस नैष्ठिक स्थिति द्वारा अक्षुण्ण ब्रह्मचर्य का पालन करने के लिए कहता है। उसकी मान्यता है कि पच्चीस-पच्चीस वर्ष के एक आश्रम की जो सीमा बाँधी गई है, वह तो उन लोगों के लिए है जो आजीवन ब्रह्मचर्य व्रत का पालन नहीं करना चाहते अथवा नहीं कर सकते, वरना जो ३० वर्ष तक, ३६ वर्ष तक और उससे भी बढ़कर जो ४० वर्ष तक, और सबसे बढ़कर जो जीवन-पर्यन्त ब्रह्मचर्य का पालन करता है, वह उत्तरोत्तर एक-दूसरे से अधिक महान् है। उनकी मान्यता है कि मुक्ति के अभिलाषी को तो जीवन-पर्यन्त ब्रह्मचर्य का पालन करना ही चाहिए क्योंकि इस द्वारा ही ओज-लाभ होता है, सूक्ष्म आध्यात्मिक तथ्य बुद्धि की पकड़ में आते हैं, आत्म-चेतस-भाव (Soul-Consciousness] परिपक्व होता है तथा आत्मिक विकास की सुदृढ़ नींव तैयार होती है। यही बात आचार-सम्बन्धी दूसरे नियमों तथा नैतिक मूल्यों के बारे में कही जा सकती है।

प्रजापिता ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्व-विद्यालय आचार-सम्बन्धी इन नियमों का अथवा नैतिक मूल्यों का १६ कला विकास करने, दानवता को छोड़ कर और मानवता से उठकर, देवत्व को प्राप्त करने की शिक्षा देता है। वह व्यक्ति और समाज

दोनों को इनके पालन के लिए प्रेरणा तथा मार्ग-प्रदर्शना देता है।

२) प्रायः सभी धर्मों का आरम्भ कुछ दार्शनिक प्रश्नों को लेकर हुआ है। ये दार्शनिक प्रश्न जगत्, कर्म, जगत्-कर्त्ता इत्यादि से सम्बन्धित हैं। शरीर ही सब-कुछ है या इसकी अग्नि-क्रिया के बाद कुछ बच रहता है? 'यह सोचने-समझने तथा करने वाली शक्ति भौतिक है या वह कुछ और है?', 'यह संसार जो दिखाई दे रहा है, यह अपने वास्तविक स्वरूप में क्या है? क्या इसका कोई रचयिता या निर्माता है? दुःख का कारण क्या है और उससे मुक्ति प्राप्त करने पर आत्मा की क्या अवस्था होती है और परमात्मा के साथ उसका क्या सम्बन्ध होता है?'—इन तथा ऐसे अन्य प्रश्नों का समाधान धर्म-ज्ञान देने का यत्न करता है। धर्म का यह पक्ष दार्शनिक पक्ष है।

दार्शनिक सिद्धान्त अथवा आध्यात्मिक मान्यताएँ

दार्शनिक सिद्धान्तों की दृष्टि से देखा जाय तो एक धर्म और दूसरे धर्म में बहुत अन्तर है। ये दार्शनिक मान्यतायें ही 'मत' कहलाते हैं और इनको लेकर धर्म के नाम पर खून भी बहा और धर्म ने कई लोगों को शान्ति भी दी है। वास्तव में इन धार्मिक सिद्धान्तों का अभिप्राय मनुष्य को सत्य का बोध कराना तथा परम सत्ता को पाना था। परन्तु इन्हीं को लेकर अनुयायियों नें वाद-विवाद तथा वैमनस्य को जन्म दे दिया। इन सैद्धान्तिक तथ्यों ने आचरण की नींव बनने का काम करना था परन्तु बाद के लोग इस नींव को भी अनाचार के धरातल पर बनाने लगे।

एक बात जिससे प्रायः सभी धर्मों के लोग सहमत हैं, यह है कि अभौतिक, आध्यात्मिक अथवा गूढ़ रहस्यों का भेदन मनुष्य अपनी बुद्धि से नहीं कर सकता। अतः हरेक धर्म-स्थापक ने या तो यह कहा है कि ये सैद्धान्तिक तथ्य उसे परमात्मा से उपलब्ध हुए हैं या मत-प्रवर्त्तकों के अनुयायिओं ने उन मत-स्थापकों को ही 'भगवान्' मान लिया। इसके फलस्वरूप भी संसार में द्वन्द्व फैला और ईश्वर-वादी लोगों में ईश्वर के बारे में मतैक्य न देख लोग नास्तिक बनने लगे तथा उन्होंने धर्म को अन्ध-विश्वास मान लिया।

३) धर्म का एक मुख्य अंग साधना, उपासना, या पुरुषार्थ है। सम्पूर्ण आध्यात्मिकविकास के लिए या प्रभु-मिलन के लिए या मुक्ति-प्राप्ति के लिए मनुष्य को क्या करना चाहिए? इस पर भी धर्म प्रकाश डालता है। किसी ने विष्णु देवता की भक्ति का उपदेश किया तो अन्य ने दुर्गा देवी का। किसी ने निराकार की उपासना का प्रचार किया तो अन्य किसी ने यज्ञ या जप को इसका साधन बताया है।

साधना, उपासना, यज्ञ-योगादि

सैद्धान्तिक मतभेद होने के कारण साधना में भी विभेद हो गये। साधना को छोड़कर अपने-अपने मत का प्रचार अधिक होने लगा। भाव तो यह था कि साधना करके साध्य की सिद्धि की जाय, उपासना द्वारा उपास्य देव के गुण अपने जीवन में लाये जायँ अथवा पुरुषार्थ द्वारा उपलब्ध उच्च बनाई जाय, परन्तु कुछ करने की बजाय लोग लड़ने लगे। किसी-किसी ने इस लड़ाई को देखकर यह कहना शुरू कर दिया कि लड़ो मत, सभी मार्ग एक एक ही लक्ष्य की ओर ले जाते हैं। गोया लड़ाई मिटाने की शुभ भावना से उसने सत्य पर ही पर्दा डालने का काम किया। अन्य किसी ने इन सभी बातों को एक बखेड़ा, झंझट अथवा आडम्बर मान कर धर्म की चर्चा ही छोड़ दी। वास्तव में साधना से ही तो मनुष्य कुछ पाता है, किन्तु कई लोगों ने साधना को ऐसा लिया कि वे साधु और संन्यासी बन गये और उन्होंने कर्म छोड़ दिया तथा सेवा लेने लगे। अन्य ने साधना को तिलञ्जलि ही दे दी।

४) समयान्तर में हरेक धर्म के लोगों के कुछ अपने रीति-रिवाज, विधि-विधान या क्रियायें और कलाप प्रचलित हो गये। धीरे-धीरे इन्होंने कर्म-काण्ड (Rituals) का रूप धारण कर लिया। शुरू में इनके पीछे भी अभिप्राय तो शायद यह था कि व्यक्तिगत तथा सामाजिक कर्म करते समय मनुष्य के मन में प्रभु की स्मृति रहे और धर्म की भावना रहे, परन्तु यह विधि-विधान सूक्ष्मता को छोड़कर स्थूल हो गये और जटिल बन गये तथा धर्म में इनकी प्रधानता हो गई तथा सर्व-सामान्य ने धर्म के अन्य

रीति-रिवाज और कर्म-काण्ड

अंगों को छोड़कर केवल इन्हें ही करना शुरू कर दिया। करना ही शुरू नहीं किया बल्कि वे पण्डों, याज्ञिकों, पुजारियों इत्यादि को पैसे देकर अपने नाम से यज्ञ, पूजा, अनुष्ठान, माला-जप इत्यादि कराने लगे।

धर्म और कर्म के बारे में कुछेक मुख्य विचार

ऊपर, धर्म का जो थोड़ा-सा परिचय कराया गया, अब उसकी पृष्ठ-भूमिका में यह समझना सहज होगा कि धर्म और कर्म के बारे में हरेक ने अलग-अलग मत क्यों व्यक्त किया।

कुछ लोगों ने धर्म में कर्म-काण्ड का बाहुल्य देखकर, धर्म को एक आडम्बर अथवा पण्डों की कमाई का साधन मान लिय और उन्होंने धर्म से ही मुख मोड़ लिया। उन्होंने यह नहीं सोचा कि यह तो खेतीं में पौधों के साथ उपजे जंगली घास-पात (weeds) हैं, जिन्हें हमें छोड़ देना चाहिए परन्तु घास पात (weeds) को देख कर पौधों को नहीं छोड़ना चाहिये।

धर्म को कर्म मानने वाले लोग

इन के प्रतिपक्षी वे लोग हैं जो धर्म को कर्म मान कर कर्मकाण्डों में ही रात-दिन लगे हुए हैं। वे धर्म के सूक्ष्म तत्त्वों को तथा आचार के नियमों को जीवन में धारण नहीं करते, दिनोंदिन उनके जीवन में अक्रोध, अहिंसा, जितेन्द्रियता इत्यादि की कलाएँ भी नहीं बढ़ रहीं; उनके जीवन में रूहानियत अथवा आध्यात्मिक श्रेष्ठता भी देखने को नहीं मिलती. केवल मन्त्रोच्चारण पाठ-पूजा यज्ञ-यात्रा में ही वह लोग लगे रहते हैं और हठ-क्रियाएँ भी कर रहे हैं। स्पष्ट है कि ऐसा करना तो ग़लत है। यदि मुंडन संस्कार, यज्ञोपवीत (उपनयन) संस्कार इत्यादि संस्कार तथा हर आये दिन पण्डित जी को बुलाकर कर्म करना ही धर्म है, तब तो धर्म खर्चीले रस्म-रिवाज ही का नाम हुआ—ये कोई सत्य के साक्षात्कार, परम सत्ता को अनुभूति तथा चरित्र को उज्ज्वल करने वाली चीज़ तो रही ही न। इस ग़लत दृष्टिकोण से तो धर्म बदनाम हुआ है।

कर्म को धर्म मानने वाले लोग

दूसरी प्रकार के लोग वे हैं जो कर्म को धर्म मान बैठे हैं। वे धर्मों में सैद्धान्तिक मत-भेदों को तथा कर्म-काण्डों के बाहुल्य को देखकर धर्म से चिड़े हुए हैं। अतः वे कहते हैं कि धर्म कोई दूसरी चीज़ नहीं है; कर्म करना ही धर्म है। मनुष्य को अपने कर्म करते जाना चाहिए; ईमानदारी से कर्म करना ही धर्म है। उनका कथन है कि यदि कोई गृहस्थ है तो बाल-बच्चों का पालन तथा दफ़्तर या कारख़ाने में ठीक रीति से काम करना ही उसका धर्म है। इसके अतिरिक्त, वे योगादि साधनों को नहीं मानते तथा सैद्धान्तिक ज्ञान को भी सुनना आवश्यक नहीं समझते। स्पष्ट है कि यह दृष्टकोण भी ठीक नहीं है क्योंकि कर्म करते हुए मनुष्य के सामने कोई मर्यादा, कोई आचार-संहिता या कोई नैतिक मूल्य तो रहना ही चाहिए। ईमानदारी अथवा कर्त्तव्य-पालन तो एक दिव्य गुण है, धर्म तो ऐसे अन्य बहुत से गुण सिखाता।

पुनश्च, मनुष्य-जीवन का लक्ष्य क्या है, अन्य जो मानव हैं, उनके साथ हमारा सम्बन्ध क्या है, जो कर्म हम करते हैं, क्या उनका फल अगले जन्म में भी मिलता है या देह समाप्त होने पर सभी कर्म भी साथ ही समाप्त हो जाते हैं?, क्या देह, धन और घर ही सब-कुछ है या ये केवल कर्म करने तथा भोगने का साधन हैं और हम अपनी सत्ता में इन से भिन्न अभौतिक एवं शाश्वत हैं?—जब तक मनुष्य की बुद्धि में ये तथा अन्य इस प्रकार के सत्य स्पष्ट न हों तब तक कर्म, व्यवहार अथवा व्यापार के प्रति उसका सही दृष्टिकोण (Right Attitudes) कैसे निर्धारित होंगे और सत्य को जानने का मनुष्य का जो सहज स्वभाव है, उसका कैसे समाधान होगा?

फिर, कर्म तो ज्ञान तथा इच्छा पर आधारित है। धर्म-ज्ञान ही मनुष्य की इच्छा को परिमार्जित एवं मर्यादित करता है और उसका विपरीत भाव उसे उच्छृङ्खल, निरंकुश तथा स्वार्थपरक बनाता है। भौतिकवादी दृष्टिकोण को अपनाने वाले पाश्चात्य देशों में धर्म-ज्ञान के बिना जो असन्तोष, अशान्ति तथा अमर्यादा (Permissiveness) फैली है, वह प्रत्यक्ष ही है।

धर्म और कर्म को अलग-अलग मानने वाले लोग

तीसरी प्रकार के लोग वे है जो कहते हैं कि धर्म तो हरेक की निजी चीज़ है, उसके लिए हरेक को स्वतन्त्रता भी है, परन्तु राष्ट्र अथवा समाज के

मामलों में धर्म को कोई दखल नहीं होना चाहिए। प्रातः उठकर जिसकी जैसी भावना हो वह पूजा, पाठ निमाज़ या ग्रन्थ साहिब पढ़े, परन्तु जब देश या समाज के मामलों की चर्चा हो तो मनुष्य को धर्मनिरपेक्ष (Secular) हो जाना चाहिए। देश में अनेक धर्म (मत) होने के परिणामस्वरूप ही कई लोगों का ऐसा दृष्टिकोण बना, परन्तु हम देखते हैं कि शिक्षा-संस्थाओं में धर्म-शिक्षा का बहिष्कार हो जाने से विद्यार्थियों में अनुशासनहीनता किस सीमा तक पहुंच चुकी है। असहिष्णुता, हिंसा, घृणा इत्यादि का बहिष्कार करने की बजाय धर्म का बहिष्कार कर देने का ही तो यह परिणाम है कि आज जहां-तहां रिश्वत, चोर बाज़ारी, मुनाफ़ा-खोरी तथा अन्य प्रकार के भ्रष्टाचार पनप रहे हैं।

फिर, इस बात को तो भुला ही दिया गया कि धर्म केवल व्यक्ति की शान्ति या ईश्वरानुभूति के लिए नहीं हैं बल्कि समाज को गठित, पवित्र तथा प्रेम-सम्पन्न बनाने के लिए भी है और व्यक्ति के लिए कुछ नियम निर्धारित करके धर्म समाज की समस्याओं को मूल में समाप्त कर देता है। यदि यह बात समझ और मान ली जाय, तब कोई कैसे कह सकता है कि राष्ट्रीय तथा सामाजिक मामलों में धर्म-निरपेक्षता ही की नीति होनी चाहिए। जहां तक आचार या नैतिकता की बात है, हमें सर्वोत्कृष्ट अर्थात् दैवी आचार सिखाने बताने वाले धर्म की शिक्षा स्कूलों में देनी चाहिए क्योंकि लक्ष्य तो ऊँचा ही होना चाहिये। जहां तक दार्शनिक सिद्धान्तों की बात है, उसे यों जाँचा जा सकता है कि सब से अधिक किस धर्म के सिद्धान्त तर्क को भी सन्तुष्ट करते हैं तथा आचार को भी उज्ज्वल बनाते हैं और साधना को भी सहज, स्वाभाविक तथा मनोविज्ञान-सम्मत बनाते हैं। जहां तक खर्चीले कर्म-काण्डों की बात है, वह हम व्यक्ति के लिये छोड़ सकते हैं। परन्तु धर्म को ही छोड़ देना अथवा उसके प्रतिनिरपेक्ष भाव धारण करना तो घातक ही सिद्ध हुआ है।

व्यापार और व्यवहार को धर्म से अलग मानने वाले लोग

चौथी प्रकार के लोग वे हैं जोकि निजी-कार्य-व्यवहार में भी धर्म को कर्म से अलग करते हैं। वे प्रातः पूजा-पाठ करते हैं परन्तु जब दूकान पर बैठते हैं, तो धर्म को घर ही छोड़ आये होते हैं। जब उस दुकानदार को कोई ग्राहक कहता है कि आप तो एक धर्म-प्रिय मनुष्य हैं, अतः आप चोर-बाज़ारी न करें तो वह दुकानदार कहता है— "भाई साहिब, धर्म की बात घर पर; अब तो व्यापार की बात करो।" इस प्रकार, गीता पढ़ते समय लोग ऊँचे स्वर से अलाप करते हैं— "हे अर्जुन, काम, क्रोध, लोभ नरक के द्वार हैं," परन्तु पाठ से उठते ही वे बच्चों से क्रोध करने लगते हैं, रात्रि को काम रूप नरक के द्वार से भी गुज़रते हैं और दिन-भर दुकान पर या दफ़्तर में ब्लैक या रिश्वत कर के लोभ भी खूब करते हैं! इस तरह आज गृहस्थ अलग और आश्रम अलग हो गये हैं, धर्म अलग और कर्म अलग हो गया है। मन्दिरों में लोग माथा टेकते हैं परन्तु घर को वह मन्दिर न बना कर वहां पाप करने की छूट समझते हैं। स्पष्ट है कि यह दृष्टिकोण भी ग़लत है। धर्म का उद्गम तो इसी उद्देश्य से हुआ कि मनुष्य पतित होने से बचे और यदि यह आवश्यकता पूरी न हो, तो वह धर्म ही कैसा है?

लेख का कलेवर बढ़ गया हैं। अतः इसका उपसंहार करते हुए संक्षेप में यही कहना पर्याप्त रहेगा कि धर्म का कर्म के साथ गहरा सम्बन्ध है। वास्तव में धर्म का एक मुख्य उद्देश्य हमारे कर्म को सुधारना है, चाहे वह कर्म कौटुम्बिक हो, या आर्थिक, सामाजिक या राजनीतिक। इसके अतिरिक्त, धर्म का लक्ष्य मनुष्य के संस्कार तथा व्यवहार को सुधारते हुए, उसे समाज के लिये एक उपयोगी नागरिक बनाना, तथा उसका आध्यात्मिक विकास करके उसे देवत्व के दर्जे पर लाना है।

पुनश्च, प्रसिद्ध विकासवाद (Evolution theory के जन्मदाता ने तो मानव को 'योग्यतम की सुरक्षा' Survival of the fittest) का सिद्धान्त देकर मनुष्यों में द्वन्द्व बढ़ाया है और प्रसिद्ध साम्यवाद के पिता कार्लमार्क्स ने मनुष्य-मनुष्य कॉमरेड को (Comrade संगी) ही बनाया है, परन्तु धर्म मनुष्यों का शान्ति और प्रेम के सागर तथा दयालु परमात्मा पिता से नाता जोड़ कर उनमें भ्रातृत्व की भावना (Brotherhood) की भावना पैदा करता है और उन्हें

(शेष पृष्ठ ११ पर)

पवित्रता की सूक्ष्मता

ले० ब्रह्माकुमार सन्तराम, कानपुर

यूँ तो भारतवर्ष में 'पवित्रता' शब्द कोई नया नहीं है। आन्तरिक पवित्रता, निर्विकारिता व ब्रह्मचर्य पर्यायवाची शब्द ही हैं, किन्तु जिस समय पुरुषार्थी इस पुरुषार्थ में संलग्न होता है, जैसे-जैसे वह आगे बढ़ता है, माया भी सूक्ष्म रूप लेकर उसके सामने आती है। अनुभव के आधार पर ऐसा प्रतीत होता है कि यदि पुरुषार्थी माया के सूक्ष्म रूप को पहिचान ले तब तो माया उस पर वार नहीं कर पाती है अन्यथा वह उसकी बुद्धि को उलझाकर उसे कमजोर व शक्तिहीन बनाती जाती है। यह पहचान कोई पुस्तक पढ़ने से अथवा सुनने से नहीं आती है, यही इसकी विशेषता है। इसके लिए विचारसागर मन्थन तथा अनुभव आवश्यक हैं।

वास्तव में हमारे अन्दर जो सुषुप्त कमजोरियाँ होती हैं, माया उन्हें जाग्रत करके खड़ा कर देती है। इन कमजोरियों का रूप प्राय: अहम्, स्वार्थ, आसक्ति व अधिकार का होता है। जब मनुष्य ज्ञान की धारणा करते हैं, तब भी सूक्ष्म रूप से उनमें अहम् व अधिकार की भावनाएँ जागृत हो सकती हैं तथा स्वार्थ व आसक्ति, जो अति सूक्ष्म दुर्भावनाएँ हैं, वह भी प्रादुर्भूत हो सकती हैं। इस प्रकार, पुरुषार्थी विचार सागर मन्थन के बिना इन कमजोरियों का न तो अनुभव ही कर सकता है और न ही उन पर विजय पाने के लिए कोई पुरुषार्थ ही कर सकता है। उसका सारा ध्यान अन्य आत्माओं की सेवा पर तो रहता है जो वास्तव में दूसरा पुरुषार्थ हैं किन्तु उसका ध्यान अपने को सुधारने पर नहीं रहता जो ही वास्तव में पहलासूक्ष्म पुरुषार्थ हैं। ऐसी स्थिति में, उसके ज्ञान का भी दूसरों पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता है और धीरे-धीरे उसका आत्म-बल तथा प्रभाव दोनों ही गिरते जाते हैं। इस प्रकार पुरुषार्थी के मार्ग में एक बड़ा विघ्न (Hurdle) आ जाता है जिसे पार करने के लिए अन्तर्मुखी होकर अपना सारा ध्यान अपनी छिपी हुई कमजोरियों की अनुभूति पर देना चाहिए। यही सूक्ष्म पुरुषार्थ है। इस प्रकार, जब पुरुषार्थी अपनी गुप्त कमजोरियों को पहचान कर बुद्धियोग बल से उन पर निरन्तर ध्यान देता है तथा अपना चार्ट रखता है तभी उन पर विजय प्राप्त कर पाता है। जब वह अपने दृष्टिकोण को बदल कर तथा स्वार्थ, अहम् भाव, आसक्ति व अधिकार के स्थान पर अपने में त्याग, सेवा, स्नेह व अनासक्ति धारण करता है तब ही उसे आन्तरिक खुशी होती है और उसकी बुद्धि हल्की रहती है। वास्तव में तभी वह ईश्वरीय सेवाधारी बनता है तथा अन्य आत्माओं को जागृत करके उन्हें निर्विकारिता तथा दैवी गुणों की धारण के लिए प्रेरणा दे सकता है।

अत: स्पष्ट है कि रूहानी सेवाधारी को सदैव अपने ऊपर ध्यान रखना आवश्यक है। इसके बिना उसकी मनोवृत्तियों तथा धारणाओं में कोई सुधार न होगा और उसके आत्मबल में वृद्धि न होगी। अन्य आत्माओं को जागृत करने की सेवा भी अत्यावश्यक है किन्तु उसके लिए सूक्ष्म पुरुषार्थी को अपने को भी पलटाना आवश्यक है।

अत: केवल दूसरों की सेवा में ही रहना तथा अपने ऊपर ध्यान न देना भी महान् भूल ही है जिससे अहंकार व अधिकार की भावनाओं में वृद्धि होने से पुरुषार्थी और ही गहरे गड्ढे में गिरता जाता है!

उलटी चाल (पृष्ठ ९ का शेष)

का परिचय देना है या यूं कहें कि सूर्य के चढ़ जाने पर भी दीपक जलाते रहना है।

यदि हम इस संसार रूपी उपवन को हराभरा एवं राम राज्य के रूप में देखना चाहते हैं या पतित संसार को पावन बनाना चाहते हैं, यदि हम भ्रष्टाचार को मिटाकर श्रेष्ठाचार के सुन्दर भवन का निर्माण चाहते हैं तो बीजरूप अथवा मूलरूप निराकार भगवान् त्रिमूर्त्ति शिव की ही अव्यभिचारी निरन्तर याद में रहने से तथा श्रीकृष्ण, श्री नारायण और श्रीराम के समान जीवन में दिव्य गुण धारण करने से हो सकता है। और अब ही हो सकता है वरना कभी नहीं।

भयंकर एड्स से भी कई गुणा...

—ब्र.कु. राजकुमारी, मजलिस पार्क, देहली

आजकल समाचार-पत्रों में 'एड्स' की चर्चा बहुत है। सुना है कि यह अति भयावह रोग है और अत्याधुनिक भी। कहते हैं यह अमेरिका जैसे समर्थ देश में जन्मा है पर इतना असमर्थ बना देता है कि रोगी ज़िंदगी और रोग दोनों का ही सामना तक नहीं कर पाता। यहां तक कि उसके अपने ही संबंधी उसके सामने तक नहीं जाना चाहते कि कहीं उन्हें भी यह रोग न लग जाए। फलत: यथोचित देख-रेख के अभाव में रोगी काल का ग्रास हो जाता है। ऐसा भी सुनने में आया है कि यह 'इम्पोर्टेड' रोग अब भारत में भी प्रवेश कर चुका है और सभी डरे-डरे से हैं।

यह सब सुनकर हमें तो एक अन्य रोग याद आ गया जो भारत में पहले से ही विराजमान है और 'एड्स' की अपेक्षाकृत अधिक भयानक है। चौंकिए नहीं! उसकी चपेट में आए रोगी हमारे चहुं ओर व्याप्त हैं। पर अफसोस तो यह है कि वे स्वीकार नहीं करते कि उन्हें यह भयंकर रोग लग चुका है। हां, यह दूसरी बात है कि 'एड्स' शरीर को लगता है जबकि यह आत्मा को। परंतु इस रोग के लक्षण जब प्रकट होते हैं तो साक्षी रहकर देखने वाला साफ समझ जाता है। आश्चर्यजनक बात तो यह है कि इस रोग से ग्रसित आत्मा स्वयं को पहले से भी अधिक जागरूक, स्वस्थ व ज्ञानी सिद्ध करती है। यह एक आध्यात्मिक रोग है। आत्मा का सर्वनाश कर देता है। एड्स के रोगी से तो समाज स्वयं ही दूर रहता है। परंतु इस रोग का रोगी स्वयं ही आध्यात्मिक जगत से दूर हो जाता है। मिलता भी है तो ऊपर-ऊपर से दिखाने मात्र।

एड्स का रोगी हरेक से सहायता पाने की तमन्ना लिए आशान्वित नयनों से निरीह सा होकर देखता है, परंतु इस आध्यात्मिक रोग का रोगी प्रत्येक को संशय और अलगाव से घूरता है। अहम् और वहम् में गोते खाता रहता है।

एड्स के ग्रस्त सहानुभूति के दो शब्द चाहता है। जबकि इस रोग का रोगी प्राय: यही कहते सुना गया है—"मुझे हुआ ही क्या है? आप-अपने को देखो। मैं बिल्कुल ठीक हूं...।"

एड्स से ग्रस्त रोगी अस्पताल में खुशी से जायेगा और दवाई मन से खायेगा। परंतु इस रोग का रोगी अपने घर में भी किसी यथार्थ ज्ञानी का आना पसंद नहीं करेगा। और यदि किसी तरह कोई शुभचिंतक उसके पास पहुंच भी जाए तो यूं कहेगा—"मुझे ठीक करने भेजा होगा। हां! हां! मैं समझ गया। मैं इतना बुद्धू नहीं हूं। आखिर हर कोई अपनी भी कुछ समझ रखता है। हमें सब पता है... आदि-आदि" या फिर यूं कहेगा—"मेरे पास समय नहीं है। सच! आजकल काम बहुत है, तबीयत भी ठीक नहीं रहती। मैं सच कहता हूं मैं तो अपनी ही मजबूरियों के कारण आ नहीं पाया। अच्छा!... अच्छा! अवश्य आऊंगा।"

कभी इस रोग का आक्रमण अधिक हो जाए और आध्यात्मिक जगत का मित्र निमंत्रण देने पहुंच जाए तो रोगी का प्रलाप इस प्रकार का होता है—"मेरे बिना कोई आश्रम थोड़े ही रुक जायेगा। जब मैं नहीं था तब क्या आश्रम नहीं चलता था? मेरे आने न आने से फर्क ही क्या पड़ता है?..." आदि-आदि।

इस संसार में प्रत्येक व्यक्ति जानता है कि जब संतान होती नहीं तो भी घर का कार्य व्यवहार चलता है। माता-पिता प्रसन्न रह सकते हैं, परंतु अगर बालक हो और सन्मुख दृष्टि गोचर न हो तो माता-पिता की क्या दशा होगी? दोनों परिस्थितियों में महान अंतर है। यह बात रोगी रोग के ज्वारभाटे में भूल चुका होता है।

इस रोग के रोगी की आत्मा जितनी कमज़ोर होती जाएगी उतनी ही वाणी तेज़ और स्वर तीखा होता जाएगा, मिजाज़ में भी नशा होता जाएगा।

हम सभी इस बात से भलीभांति परिचित हैं कि परिवार में भी जब एक को शारीरिक कष्ट होता है तो घर का दूसरा सदस्य उसकी तिमारदारी करके उसे ठीक करने में मनोयोग से प्रयत्नशील होता है। ठीक इसके विपरीत जब उस दूसरे सदस्य को कुछ कष्ट हो जाए तो वही सदस्य उसकी सेवा करने लगता है जो कुछ दिन पूर्व स्वयं कष्टमयी अवस्था में था। ऐसा पारस्परिक सहयोग समाज का नियम है और सेवा करने व कराने वाले एक-दूसरे को उसकी पहले वाली बीमारी नहीं जताते। परंतु इस आध्यात्मिक रोग का रोगी उमंग दिलाने की सेवा करने आए हुए हितैषी का सहयोग भी स्वीकार न करके अपना रोग तो बढ़ाता ही है, साथ ही उसे भी उसकी पूर्वभूत रोगी अवस्था याद दिलाकर हतोत्साहित कर देता है।

आइए ! इस रोग की पूरी जानकारी अपनी सुरक्षार्थ प्राप्त करें—

रोग के लक्षण:—आत्मा को आंतरिक फीलिंग का फ्लू १०८ डिग्री, परंतु बाहर से मौन व योग प्रदर्शन।

चेहरा:—बाहर से गम्भीरता प्रदर्शन करता हुआ अति तनावमय।

आंखें:—झुंझार और अवगुण अन्वेषक।

वाणी:—सन्मुख ''हां जी'' पीछे रोषमयी ''ना जी।''

वृत्ति:—निन्दक, नीचे गिराने वाली, निमित्त बने हुओं की आलोचना, आध्यात्मिकता से नष्टोमोहा, बीती बातों प्रति स्मृतिलब्धा, सेवा और ज्ञान से मन हट जाना। अज्ञानतावश रोग लगाने वालों की ओर कशिश होना।

व्यवहार:—असंतुष्टता तथा ज्ञानयोग के कार्यक्रमों से एलर्जीवश, अपनी बुद्धि का प्रयोग न करते हुए पर-उन्नति से ईर्ष्यावश असहयोग। इसके किटाणु श्रवण रीति द्वारा यत्र-तत्र-सर्वत्र बहुत शीघ्र फैलते हैं।

रोग का कारण:—(i) कान का कच्चा होना। (ii) अपना सही पोतामेल कभी न बताना। (iii) निमित्त बने हुओं प्रति-भावना, स्नेह और विश्वास की कमी। (iv) व्यर्थ संकल्पों में रमण करना और विपरीत स्थानों पर अवश्य जाना। (v) अनुमान-संशय की अंधेरी गलियों में भटकना। (vi) इन्क्वायरी की आदत होना। (vii) कनरस और बाह्यमुखता का संस्कार होना। (viii) श्रीमत और मर्यादा में मनमत मिक्स करके चलना। (ix) परख-शक्ति की कमी। (x) अतिरिक्त आत्म-विश्वास (over confidence)।

रोग के निवारण के लिए उपचार:—

(i) अमृत वेले परमपिता परमात्मा शिव के साथ रूह-रिहान अवश्य करें। उस सुप्रीम सर्जन को अपने रोग का पूरा ब्यौरा दें। (ii) निमित्त बने हुओं से स्पष्ट और सच्चा कहें। उनके समीप अधिक रहकर सच्चाई की जांच करें। (iii) प्रतिदिन प्रातः क्लास में संगठन में ''ज्ञान सूर्य बाथ'' अवश्य लें। (iv) विचार सागर मन्थन द्वारा बुद्धि का व्यायाम अवश्य करें। (v) ''साक्षीपन'' के स्टेथ-स्कोप से स्व के मन-वचन-कर्म की चैकिंग अवश्य करें। (vi) अमृत वेले से रात्रि तक हर घंटे में दो-तीन मिनट अंतर्मुखता का 'डोज़' लें। (vii) सत्यता और सरलता से अपने देहाभिमान रूपी ब्लड-प्रैशर को चैक करें। (viii) धर्मराज बाबा का भय रखें। (ix) रात्रि सोने से पूर्व सारे दिन की दिनचर्या पर बुद्धि की दृष्टि घुमाकर अपनी भूल का एहसास करें। (x) रोग फैलाने वाले को छुपाएं नहीं, न डरें। (xi) रोग न लगने का चैलेंज न करें।

परहेज़:— (i) पर-चिंतन, तेरी-मेरी तथा अवगुण दर्शन से दूर रहें। (ii) शिवबाबा के ज्ञान के अतिरिक्त कुछ न सुनें। (iii) विवेकशीलता तो हो पर मनमत से दूर रहें। (iv) इस प्रकार के रोगी का हालचाल पूछने न जाएं। मिल भी जाए तो परमात्मा प्रभाव और ज्ञान-योग का चश्मा तुरंत लगा लें। (v) सेवा की दूरी को दूर करें।

पथ्य:— (i) परमपिता परमात्मा शिव से सर्व-संबंधों रूपी फलों का जूस लें। (ii) ईश्वरीय अनुभवों का सूप। (iii) शुभ भावना और सकारात्मक संकल्पों का दलिया। (iv) सेवा की डाई-फ्रूट। निमित्त बनों पर रोगी का विश्वास और आशावादी होना भी आवश्यक है।

नोट:—यदि कोई यह न कर सकता हो तो ''बाबा-बाबा का अजपाजाप ले लें और प्रतिदिन क्लास अवश्य करें।'' रोग भाग जायेगा।

विश्राम:—फालतू बातों से न्यारे होकर बाबा की गोदी में निरसंकल्प अवस्था में अशरीरी होकर समा जाएं। इसके लिए बाबा का कमरा अच्छा रैस्ट-हाउस है। प्यार के सागर में डूब जाएं।

आप अवश्य सोच रहे होंगे कि रोग के लक्षण, कारण, निवारण...आदि। सभी की विस्तृत जानकारी मिली, पर आखिर इस रोग का नाम क्या है? जो मीठे ज़हर की तरह आत्मा का खाना खराब इस कदर कर देता है जो कि हितैषी तो बुरे लगने लगते और भगवान के घर से दूर करने वाले प्रिय लगने लगते। व्यवहार में इतना परिवर्तन आ जाता जो झूठ भी बोलने लगते। सत्य नीरस लगने लगता और असत्य में जान नज़र आती है।''

आप में, उनमें, हम में, तुम में, ज्ञानी में, अज्ञानी में, सभी में इस रोग के किटाणु हैं अवश्य। चाहे कम या अधिक।

नवागुंनक और अज्ञानी को तो यह रोग इतना भयभीत कर देता है जो वह आत्मा ईश्वरीय दर के दर्शन भी नहीं करने पाती। जबकि ईश्वरीय दर में बैठे हुए ज्ञानी को दर के अंदर से ही बाहर निकाल यह रोग दरबदर कर देता है।

कुछेक अपवाद भी हैं। कुछ आत्माएं ईश्वरीय दर तो नहीं छोड़तीं, परंतु इस रोग के किटाणु थोड़े-बहुत अंदर होने के कारण स्नेहिल भावना समाप्त हो जाती है। परिणामस्वरूप वह आत्मा पूरा लाभ नहीं ले पाती।

इतिहास साक्षी है इस रोग ने मन्थरा द्वारा कैकेयी को

बिगाड़ा, नारदमुनि ने... ।

चलिए छोड़िए ग्रंथों की बातें । आज के जनजीवन में भी यह संक्रामक रोग महामारी का रूप ले चुका है । घरों के घर तबाह हो रहे हैं । अनबन, मनमुटाव, तलाक, आत्महत्या और न जाने क्या-क्या वारदातें करा रहा है यह रोग । बड़े-बड़े बुद्धिजीवी-तीसमारखां इसकी चपेट में आ जाते हैं। आपकी जिज्ञासा चरम पर पहुंच चुकी होगी कि आखिर क्या नाम है—ऐसे भयंकर रोग का। अच्छा तो सुनिए !

नाम है—ऐसे भयंकर रोग का । अच्छा तो सुनिए !

इसका नाम है—**संगदोष**।

एड्स का रोगी तो दुनिया से ही चल बसता। रोगी का भी छुटकारा और रोग से भी। परंतु इस रोग का रोगी तो इसी संसार में, समाज में बाइज्जत रहता है । हां, जीते जी ज्ञान-योग से मर जाता है । उसका ओज-तेज-खुशी समाप्त हो जाती है।

आइए ! स्व और विश्वकल्याणार्थ, आत्माओं के प्रति रहमभाव रखते हुए इस रोग को जड़ से उखाड़ने के लिए कटिबद्ध हो जाएं। "संग-दोष उन्मूलन" का बीड़ा उठाएं। सावधान ! संगदोष भी मायावी दुनिया का खूबसूरत गेट है। विषमयघटक का अमृतमय मुख है। माया का पाम्प शो है।

एक अपील ! दूरदर्शिता की 'आई-ड्राप अवश्य डालें तथा स्पष्टता का टीका लगवाना न भूलें। □

हम सभी को

न गिरेंगे हम न गिरने देंगे किसी को।
उठेंगे हम उठायेंगे हम सभी को।।

हम फरिश्तों को देखेगी ये दुनिया।
पावन करेंगे दृष्टि से हम सभी को।।

चांद-सा चमकेंगे इस अंधेरी दुनिया में।
ज्ञान सूर्य का पता देंगे हम सभी को।।

खिले फूल-सा चेहरा देख पूछेगी दुनिया।
मधुबन का मार्ग बता देंगे हम सभी को।।

देह के सम्बंधों में डूबी हुई दुनिया।
काम चिता से उतारेंगे हम सभी को।।

मुरली की धुन पर नाचती हम सजनियां।
सच्ची रास का राज देंगे हम सभी को।

□ब्र.कु. आर.एल. श्रीवास्तव,

विजयवाड़ा सैकेंड टाउन में उप-सेवाकेंद्र का उद्घाटन समारोह मनाया गया । भ्राता रंगाराव **अर्बन डिवेलपमेंट चेयरमैन** अपने विचार सुना रहे है । साथ में बी.के. शांता, सविता, चंद्रकांता विराजमान है ।

थाना ब्रह्माकुमारी लाजवंती तथा प्रमोद भाई **रशिया** के वन मंत्री को ईश्वरीय सौगात देते हुए।

नयी दिल्ली (पश्चिम विहार) वार्षिक उत्सव के अवसर पर संसद सदस्य भ्राता चौ. भरतसिंह जी पधारे थे । मंच पर भ्राता चावला जी, ब्र.कु. हृदय मोहिनी जी व अन्य भाई-बहन बैठे है ।

आध्यात्मिक सेवा समाचार

□ब्र.कु. सत्य नारायण तथा ब्र.कु. लक्ष्मण, कृष्णा नगर, दिल्ली द्वारा संकलित

काठमाण्डों (नेपाल): में विश्वशांति भवन का उद्घाटन और आध्यात्मिक शांति सम्मेलन का आयोजन किया गया । विश्वशांति भवन का उद्घाटन पूर्व प्रधानमंत्री भ्राता नगेंद्र प्रसाद रिजाल जी व आदरणीय दादी चंद्रमणि जी ने किया । रिजाल जी ने कहा कि यह विश्वशांति भवन चारों तरफ ज्ञान की ज्योति फैलायेगा । इसके द्वारा जन-जन को ईश्वरीय संदेश मिलेगा और चरित्र का निर्माण होगा । आध्यात्मिक शांति सम्मेलन राष्ट्रीय सभागृह में रखा गया था । इस सम्मेलन के मुख्य अतिथि विदेश तथा भूमि सुधार मंत्री भ्राता शैलेंद्र कुमार उपाध्याय जी थे । इस सम्मेलन में जापान, प. जर्मनी तथा बर्मा के राजदूत अपने परिवार सहित आये हुए थे । भ्राता जगदीश जी ने अपने प्रवचन में नेपाल, एशिया तथा विश्व को शांति क्षेत्र घोषित करने का प्रस्ताव रखा जिसको भू.पू. प्रधानमंत्री रिजाल जी ने समर्थन किया । कन्याओं के समर्पण समारोह में रानी साहिबा ने सभी कन्याओं को शाल पहनाएं। नारायणगढ़ तथा हेटोडा में दादी चंद्रमणि जी के पहुंचने पर उनका स्वागत किया गया । इन दोनों स्थानों पर ईश्वरीय विश्वविद्यालय के लिए भवन बनाने हेतु जमीन मिली है । भवनों का शिलान्यास दादी चंद्रमणि जी द्वारा कराया गया। □

बम्बई (गाम देवी): समाचार मिला है कि "पिछले दो महीनों से लगातार ब्रह्माकुमारी बहनें, डॉक्टर्स, वकील, व्यापारी वर्ग आदि से सम्पर्क कर रही थीं । इनमें से एक ग्रुप को माउंट आबू राजयोग शिविर में ले जाया गया । माउंट आबू से आने के बाद उनका स्नेह-मिलन रखा गया । अब वे ज्ञान शिविर के लिए बराबर आ रहे हैं। □

तिनसुकिया: सेवाकेंद्र द्वारा मालनीकान नामक स्थान पर जहां एक बहुत बड़ा मेला लगता है उस अवसर पर एक राजयोग प्रदर्शनी का आयोजन किया गया जिससे अनेक आत्माओं को शिवबाबा का संदेश मिला । इसके पश्चात् उत्तर लखीमपुर ज़िले में धेमानी नामक स्थान में विष्णु मंदिर के प्रांगण में विश्वशांति प्रदर्शनी लगाई गई जिसका उद्घाटन वहां के ई.ए.सी. भ्राता जगदीश चंद्र चौधरी ने किया । उस समय अन्य चार मैजिस्ट्रेट भी उपस्थित थे । सभी लोगों ने प्रदर्शनी का अवलोकन किया । ठाकुरबाड़ी में भी तीन दिन की राजयोग प्रदर्शनी का आयोजन किया गया जिसका उद्घाटन वहां के ए.डी.सी. ने किया । उस समय नगर के अनेक प्रतिष्ठित व्यापारी-गण भी विद्यमान थे । सभी ने प्रदर्शनी को बड़े ही ध्यानपूर्वक देखा। □

गोहाटी: समाचार मिला है कि यहां पर अखिल भारतीय पुस्तक मेला का आयोजन किया गया था उसमें हमें भी एक स्टाल मिला था । जिसमें प्रदर्शनी एवं साहित्य द्वारा अनेक आत्माओं की सेवा हुई। प्रदर्शनी का उद्घाटन आसाम राज्य के पूर्ति मंत्री भ्राता विराज शर्मा जी ने किया । इसके अलावा विशाल विश्वशांति महायज्ञ में ब्रह्माकुमारी बहनों को उद्घाटन के लिए निमंत्रण मिला था । बहनों ने यज्ञ की विशेषता को समझाया और दीप जगाकर उद्घाटन किया । नवगांव ज़िला में तथा हाथी गांव में भी आध्यात्मिक प्रदर्शनी लगाकर अनेक आत्माओं की सेवा की गई। □

छत्तरपुर: ज्ञात हुआ है कि छत्तरपुर जेल में प्रवचन का कार्यक्रम हुआ जिसमें अनेक कैदियों ने लाभ उठाया । सेवाकेंद्र पर भी त्रिदिवसीय राजयोग शिविर का कार्यक्रम हुआ जिसमें जेल अधीक्षक, डॉक्टर्स, वकील आदि प्रतिष्ठित व्यक्तिओं ने लाभ लिया । इसके अलावा नौगांव में भी सेवाकेंद्र पर योग शिविर का कार्यक्रम हुआ जिसमें डॉक्टर्स, इंजीनियर्ज, नगरपालिका पार्षद आदि आत्माओं ने राजयोग द्वारा मानसिक शांति का लाभ उठाया। □

दिल्ली (पाण्डव भवन): की ओर से प्राचीन राजयोग प्रदर्शनी का आयोजन नेशनल फिज़ीकल लेबोरेट्री कालोनी में किया गया। जिसका उद्घाटन वहां के डायरेक्टर भ्राता डॉ. एस.के. जोशी ने किया और दादी हृदयमोहिनी जी ने शिवध्वजारोहण किया । प्रदर्शनी के साथ-साथ तीन दिन का योग शिविर भी चला जिसमें वहां के डिप्टी डायरेक्टर तथा अन्य अधिकारियों ने भी भाग लिया । यह प्रदर्शनी वहां के लोगों के लिए काफी लाभप्रद रही। □

लोनावला में "विश्वशांति आध्यात्मिक मेले का आयोजन किया गया । इस मेले का उद्घाटन लोनावला के नगराध्यक्ष माननीय भ्राता बी.डी. देशमुख जी ने किया । इस मेले को देश-विदेश की अनेक आत्माओं ने देखा तथा लाभ उठाया । इस मेले के अंतर्गत एक भव्य शोभा-यात्रा का आयोजन किया गया । इसके अतिरिक्त "महिला मिलन समारोह", "उद्योग में योग समारोह", "विश्व-एकता समारोह" का भी आयोजन किया गया । इस मेले के समाप्ति समारोह में गुजरात के शास्त्री जी बालयोगी जी पधारे थे । उन्हों ने कहा कि यह मेला अंधकार को मिटाने वाला है, विकारों को हटाने वाला है और सभी के मन को प्रभु में जुटाने वाला है। □

भावनगर सेवाकेंद्र की ओर से ईश्वरीय सेवाएं हुई । पीपरल गांव में प्रवचन, प्रोजेक्टर-शो और प्रदर्शनी का आयोजन किया गया । और सणीसरा में रामकथा में प्रवचन का आयोजन हुआ । वहां के लोकभारती प्रसिद्ध संस्था में प्रदर्शनी, योग शिविर, ज्ञान शिविर के कार्यक्रम हुए । इस तरफ भावनगर में पिछले मास में सात अलग-

अंलग स्थानों पर प्रवचन हुए । दादी जानकी जी के आगमन पर एक स्नेह-मिलन में अनेक प्रतिष्ठित व्यक्ति दादी जी से मिलने आये । उनकी अच्छी सेवा हुई । लंदन से पधारी बी.के. जैमिनी बहन ने विदेशों में हो रही ईश्वरीय सेवाओं के अनुभव से सबको अवगत कराया। □

भुवनेश्वर सेवाकेंद्र से अवगत हुआ है कि भारत सरकार के (संचार राज्यमंत्री) भ्राता अजीत कुमार पंजा के उड़ीसा आगमन पर स्वागत किया गया तथा यह विचार-विमर्श किया गया कि दूरदर्शन और रेडियो द्वारा कैसे विस्तारपूर्वक ईश्वरीय ज्ञान और सहज राजयोग उड़िया भाषा में दिया जाये जिससे जन-जन तक पहुंचे । । संस्था की तरफ से जो पत्र मंत्री महोदय को दिया गया था उसके ऊपर उन्होंने दूरदर्शन डायरेक्टर और आकाशवाणी डायरेक्टरों को कार्यवाही के लिए निर्देश दिया कि सप्ताह में एक बार अवश्य ईश्वरीय ज्ञान का प्रसार किया जाए। □

बड़ौदा सेवाकेंद्र की ओर से पानीगेह विस्तार में रणछोड़ जी के मंदिर में विश्वशांति प्रदर्शनी का आयोजन किया गया । इसके अलावा रिलीफ सोसायटी में चल रहे सतसंग में और मृत्यु प्रसंग पर एक प्रवचन हुआ । ताजपुर गांव में भी ईश्वरीय संदेश दिया गया । पादरा गांव में पादरा तालुका के गांवों के सरपंचों का स्नेह-मिलन रखा गया जिसमें बड़ौदरा ज़िला पंचायत के प्रमुख भ्राता जगदीश भाई पटेल, ज़िला कलेक्टर भ्राता एन.सी. दवे, तालुका पंचायत के प्रमुख अंबु भाई पटेल तथा अन्य प्रतिष्ठित व्यक्ति पधारे थे । विद्यालय की ओर से बहनों ने राजयोग और चरित्र निर्माण पर समझाया। □

भरतपुर सेवाकेंद्र की गीता पाठशाला हेल्क में एक विशाल प्रभातफेरी निकाली गयी । इस अवसर पर करीब सात गीता पाठशालाओं के भाई-बहनों ने भाग लिया । सायं को एक सार्वजनिक कार्यक्रम रखा गया था जिसमें चित्र प्रदर्शनी की व्याख्या, प्रवचन, गीत तथा दिव्य अनुभव सुनाए गये । महान शक्ति नामक वीडियो फिल्म दिखाई गई। हेल्क ग्राम के आसपास के पांच ग्रामों से भाई-बहनों ने आकर ईश्वरीय ज्ञान का संदेश पाया। □

रायगढ़ सेवाकेंद्र की ओर से अनेक आदिवासी ग्रामों में आध्यात्मिक प्रवचनों का प्रोग्राम किया गया था । भोलेनाथ बाबा के अनेक भोले-भाले ग्रामीण बच्चों ने परमात्मा का दिव्य संदेश प्राप्त किया । वर्तमान समय में ग्राम कुर्रा, सोनीजुरी एवं कुजारा में गीता पाठशाला खुल चुकी है । इन ग्रामों में आदिवासियों की अच्छी सेवा हुई। □

रादौर (कुरूक्षेत्र): सेवाकेंद्र द्वारा मानव कल्याण आध्यात्मिक सम्मेलन का आयोजन-किया गया । यह प्रोग्राम पंजाबी धर्मशाला में हुआ । इस सम्मेलन में शहर के मुख्य व्यक्ति भ्राता सत्य प्रकाश बंसल जी भी पधारे थे । सम्मेलन के पश्चात् सात दिन तक आध्यात्मिक प्रदर्शनी भी चली और ज्ञान एवं योग शिविर भी सुबह-शाम चलते रहे। □

सोनीपत सेवाकेंद्र की ओर से गोहान के अंदर दो दिन की प्रदर्शनी रखी गयी थी । प्रदर्शनी का उद्घाटन कुछ महात्माओं द्वारा करवाया गया । सायं को प्रवचन किया गया । दूसरे दिन अनाज मंडी में भी प्रोग्राम रखा गया । जिससे अनेक आत्माओं की भ्रांतियां दूर हो गयीं। □

अहमदाबाद (मणि नगर): सेवाकेंद्र की ओर से ''राम राज्य सत्य या स्वप्न'' पर शहर के एच.के. हॉल में महिलाओं का एक सेमीनार का आयोजन किया गया था । इस सेमीनार में विशेष कर महिला संस्थाओं की प्रमुख बहनों ने भाग लिया । मुख्य मेहमान के रूप में गुजरात राज्य की मंत्री बहन सुशीला शाह थीं। वक्ताओं के रूप में बहन पद्मा कुमारी सुरक्षा और सुस्मिता बहनें थीं। विद्यालय की तरफ से ब्रह्माकुमारी शारदा बहन ने रामराज्य की सत्यता पर प्रकाश डाला । इस प्रोग्राम द्वारा अनेक आत्माओं को रामराज्य का सत्य परिचय प्राप्त हुआ। □

मुज़फ्फरनगर सेवाकेंद्र से ज्ञात हुआ है कि पिछले दिनों कई स्थानों पर आध्यात्मिक प्रदर्शनी का आयोजन किया गया । सर्वप्रथम गांव विरालसी के शिव मंदिर में, फिर रूहाणा गांव में कन्या पाठशाला के अंदर ततपश्चात् मुर्दघाट के एक बहुत बड़े मेले में, तथा सैनिक शस्त्र झण्डा दिवस के मेले में प्रदर्शनी लगाई गई । इन प्रदर्शनियों द्वारा आसपास के अनेक गांवों के लोगों को ईश्वरीय संदेश मिला । गांवों के अलावा कस्बा देवबंद में भी एक मास के लिए प्रदर्शनी लगाई गई। □

अमरेली सेवाकेंद्र की ओर से तालुका शाला में आध्यात्मिक प्रदर्शनी के साथ-साथ रचता शिवबाबा और रचना, ब्रह्मा, विष्णु एवं शंकर की सुंदर झांकी सजाई गयी । अमरापुर और लाठी गांव में आध्यात्मिक प्रदर्शनी, स्लाईड-शो व प्रवचनों के द्वारा अनेक आत्माओं को ईश्वरीय संदेश मिला । इसके अलावा आसपास के अनेक गांवों की सेवा हुई। □

हाथरस ग्राम सेवा अभियान के अंतर्गत ग्राम मदूकी में चरित्र-निर्माण प्रदर्शनी एवं त्रिदिवसीय सम्मेलन का आयोजन किया गया । इस कार्यक्रम के अंतर्गत बारह ग्रामों में ग्राम पदयात्रा की गई । इन बारह ग्रामों की जनता को सम्मेलन में पधारने का निमंत्रण दिया गया । समारोह की अध्यक्षता ग्राम प्रधान होतीलाल त्यागी ने की । प्रवचन के साथ-साथ नाटक भी दिखाया गया । □

मिर्ज़ापुर सेवाकेंद्र के द्वारा चुनार सेवाकेंद्र का मासिक उत्सव मनाया गया जिसमें शहर के विभिन्न क्षेत्रों में प्रभातफेरी निकाली गई । शाम को वीडियो द्वारा ज्ञान-गंगा फिल्म दिखाई गई। तथा दूसरे दिन सायं:काल में छाया चित्र के द्वारा ग्राम विकास प्रदर्शनी दिखाई गई। इसका समाचार दैनिक जागरण में भी निकाला । ओबरा में भी वीडियो फिल्म अनोखा संसार दिखाई गई। इन प्रोग्रामों से अनेक आत्माओं ने लाभ लिया। □

ग्वालियर समाचार मिला है कि ग्वालियर तानसेन रोड सेवाकेंद्र की ओर से नौ दैवियों की भव्य चैतन्य झांकी एवं विश्व नव-निर्माण आध्यात्मिक प्रदर्शनी का आयोजन किया गया जिसका उद्घाटन महापौर जगदीश चंद्र गुप्ता जी ने किया । प्रदर्शनी के साथ-साथ राजयोग शिविर का भी आयोजन किया गया । जिससे अनेक आत्माओं ने लाभ उठाया। □

महोबा सेवाकेंद्र की ओर से गांव-गांव की सेवा का लक्ष्य रख कई गांवों में सेवा की गई। जिनमें पनवाड़ी, टिकरिया, सुगिंरा, सूपा धीनगर, भरवारा, महुआ, लौडी, पीरा, डरबारा आदि मुख्य हैं । सभी गांवों के प्रधानों की भी सेवा हुई । कहीं पर प्रवचन, कहीं पर प्रदर्शनी, कहीं पर दैवियों की झांकी । इस प्रकार सभी गांवों की जनता ने लाभ लिया। □

दार्जिलिंग सेवाकेंद्र की ओर से पशुपतिनगर में (नेपाल में) एक राजयोग उप-सेवाकेंद्र का उद्घाटन हुआ । एक नेपाली ब्राह्मण परिवार ने मकान बनाकर सब साधन से सजाकर इस उप-सेवाकेंद्र की स्थापना की । यहां नेपाली भाई-बहनों की सेवा हो रही है। □

थाना समाचार मिला है कि रशिया के वन मंत्री भ्राता ए.आय. इवेरेव और विदेश राज्य मंत्री भ्राता सुरावटसेव शहर के एक दिन के दौरे पर आने पर फ्रेंड्स सोसायटी ऑफ सोवियत यूनियन की शहर शाखा के द्वारा आयोजित कार्यक्रम में उनका स्वागत करने के लिए ब्रह्माकुमारी संस्था को भी निमंत्रण मिलने पर सभा में शिवबाबा का परिचय देकर दोनों मंत्रियों को ईश्वरीय साहित्य भेंट कर अभिवादन किया गया । इस अवसर पर शहर के मेयर भ्राता बसंत दावखरे, ज़िला कांग्रेस समिति के अध्यक्ष भ्राता प्रभाकर हेगडे, रशिया के भारत स्थित राजदूत और राज्य के कानून न्यायविधि एवं शिक्षा राज्य मंत्री कु. चंद्रिका केनिया आदि उपस्थित थे। □

उत्तरकाशी सेवाकेंद्र की ओर से चम्बा पर्वत पर एक आध्यात्मिक प्रदर्शनी का आयोजन किया गया । चम्बा के आसपास के करीब ३० गांवों के लोगों ने यह प्रदर्शनी देखी । चम्बा में स्थाई रूप से ईश्वरीय सेवाकेंद्र खोलने का प्रयास किया जा रहा है। □

शिमला हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय में कन्याओं के छात्रावास में राजयोग पर एक विशेष कार्यक्रम आयोजित किया गया। इस शुभ अवसर पर विश्वविद्यालय के रजिस्ट्रार डॉ. ए.आर. चौहान, डॉ. एल.आर. वर्मा, डॉ. के.एस. श्रीकोट, श्रीमती विद्या व कृष्णा तथा अन्य छात्राओं ने इस प्रोग्राम से लाभ लिया । इसके अलावा स्नेह-मिलन का कार्यक्रम रखा गया । इस अवसर पर भ्राता कौलसिंह ठाकुर, हिमाचल प्रदेश के स्वास्थ्य मंत्री, तथा भ्राता पीरू राम हिमा, के कल्याण मंत्री सेवाकेंद्र पर पधारे और विश्वशांति पर राजयोगिनी ब्रह्माकुमारी हृदयमोहिनी जी से विचार-विमर्श हुआ । ततपश्चात् एकता और विश्वशांति सम्मेलन का आयोजन किया गया । इस सम्मेलन का उद्घाटन बहन विद्या स्टोकस स्पीकर हि.प्र. ने किया । इस भव्य शांति सम्मेलन में भ्राता आदर्श कुमार, महापौर शिमला भी शामिल हुए । इस सम्मेलन का समाचार आकाशवाणी शिमला द्वारा प्रसारण हुआ । जिससे जन-जन तक ईश्वरीय संदेश पहुंचा। □

गुमला सेवाकेंद्र की ओर से मुणू नामक स्थान में 'गायित्री यज्ञ' के अवसर पर आयोजित मेले में आध्यात्मिक प्रदर्शनी लगाई गई, जिसके द्वारा विभिन्न प्रांतों से पधारे संन्यासियों, पंडितों, भक्तों ने लाभ उठाया । बनारस से पधारे स्वामी सत्यानंद जी ने भी इस प्रदर्शनी को देखा तथा प्रभावित हुए । इसके अलावा उर्मी नामक ग्राम में भी प्रदर्शनी का आयोजन किया गया जिसके द्वारा वहां के लोगों ने लाभ उठाया। □

बड़ौदा (सयाजी गंज): सेवाकेंद्र की ओर से छाणी गांव में एक प्रदर्शनी का आयोजन किया गया । इस प्रदर्शनी द्वारा अनेक आत्माओं ने लाभ उठाया । साराभाई सोसायटी में स्नेह-मिलन के प्रोग्राम के बाद अनेक आत्माएं ज्ञान-योग की शिक्षा नित्य लेने आ रही हैं । मानव एकता सम्मेलन में सर्वधर्म की आत्माओं ने उमंग से भाग लिया तथा सर्वधर्म एकता की अपनी इच्छा प्रगट की । वहां के शिविर कार्यक्रम से भी अनेक आत्माओं ने लाभ उठाया। □

गिरधरनगर सेवाकेंद्र के द्वारा गिरधरनगर सोसायटी के कमेटी मेम्बर्स के लिए एक शिविर का आयोजन किया गया था । मेम्बरों ने बड़ी गहराई से ज्ञान-योग सीखा और अपने जीवन में धारण करने का निश्चय किया । सभी ने माउंट आबू राजयोग शिविर में जाने की इच्छा प्रकट की । डॉक्टर्स की एक मीटिंग में गुजरात राज्य के अस्पताल में ज्ञान-योग की शिक्षा पर विचार-विमर्श हुआ । अस्पताल में योग भवन बनाकर सभी को इससे होने वाले लाभ से अवगत कराया। □

मुरार सेवाकेंद्र के द्वारा एक भव्य नौ दैवियों की झांकी एवं आध्यात्मिक प्रदर्शनी व प्रवचन का प्रोग्राम रखा गया । झांकी का उद्घाटन मोहनलाल सर्राफ सोने-चांदी के प्रमुख विक्रेता ने किया । कार्यक्रम के दूसरे दिन प्रभातफेरी निकाली गई जिसके द्वारा मुरार वासी आत्माओं को शिवबाबा का संदेश प्राप्त हुआ। □

रांची समाचार मिला है कि नये उप-सेवाकेंद्र सिमडेगा में भी ईश्वरीय सेवा का कार्य प्रारम्भ हो गया है । वहां के प्रमुख मारवाड़ी समाज के मंदिर के प्रांगण में महिला मण्डल के आमंत्रण पर एक सप्ताह बहनों ने प्रतिदिन एक घंटा प्रवचन किया, जिससे लाभांवित होकर कुछ माताएं उप-सेवाकेंद्र पर आ रही हैं। □

निज़ामाबाद उप-सेवाकेंद्र से समाचार मिला है कि आंध्र प्रदेश की एक पर्यटक प्रदर्शनी में अपने सेवाकेंद्र को भी स्टाल मिला था । वहां पर आध्यात्मिक प्रदर्शनी लगाई गई थी । इस प्रदर्शनी द्वारा अनेक आत्माओं को ज्ञान-योग का परिचय मिला । अब वे ज्ञान-योग से लाभ लेने के लिए सेवास्थल पर आ रही हैं। □

अमरावती सेवाकेंद्र से ज्ञात हुआ है कि मोशी में आध्यात्मिक प्रदर्शनी का आयोजन किया गया । जिसका उद्घाटन भ्राता वकील राजामाऊ चौधरी जी ने किया । मुख्य अतिथि के रूप में मोर्शी के न्यायाधीश भ्राता अरविंद जी भी पधारे थे । आप तीन दिन तक योग शिविर में आये । इसके अलावा सिंगनापुर में भी योग शिविर द्वारा व वीडियो फिल्म द्वारा अच्छी सेवा हुई। □

बारिपदा सेवाकेंद्र की ओर से लक्ष्मी नारायण मंदिर में एक आध्यात्मिक प्रवचन का प्रोग्राम रखा गया था । उस प्रवचन में बारिपदा के प्रसिद्ध व्यापारी भ्राता द्वारिका प्रसाद जी ने सभापति के रूप में भाग लिया । और मुख्य वक्ता के रूप में ब्रह्माकुमारी बहनों ने भाग लिया । इस प्रोग्राम द्वारा अनेक मारवाड़ी भाई-बहनों ने लाभ लिया। □

पणजी-गावा सेवाकेंद्र की ओर से यहां के कलगुट बीच पर तथा शांता दुर्गा मंदिर में राजयोग प्रदर्शनी का आयोजन किया गया उसका उद्घाटन कलगुट के आमदार भ्राता श्रीकांत मल्लिक जी ने किया । सार्वजनिक कार्यक्रम का भी आयोजन किया गया था । जिसका उद्घाटन महापंसा कालेज के प्राध्यापक भ्राता गोपाल राव मयेकर जी के द्वारा सम्पन्न हुआ । इसके अलावा शिर गांव में तथा डिचोली गांव में प्रदर्शनी व वीडियो द्वारा ईश्वरीय संदेश दिया गया। □

उमरेड सेवाकेंद्र की ओर से प्रतिष्ठित व्यक्तियों का स्नेह-मिलन सेवाकेंद्र पर ही रखा गया था जिसमें इंजीनियर्ज, डॉक्टर्स सपरिवार पधारे । मांठक ग्राम में भी प्रदर्शनी का आयोजन किया गया । इस प्रदर्शनी और राजयोग शिविर द्वारा ग्रामवासियों ने लाभ उठाया। □

''सर्व के सहयोग से सुखमय संसार'' सम्मेलन

कोचीन में २ मई को होने वाले आध्यात्मिक सम्मेलन से पूर्व ३० अप्रैल को भारतीय विद्याभवन के सभाग्रह में एक कार्यक्रम रखा गया जिसमें गुयाना के उच्चायुक्त भ्राता स्टीव नारायण जी तथा ब्र.कु. निर्वैर जी मुख्य वक्ता के रूप में थे। १ मई को एक बहुत ही शोभनीक शांति यात्रा निकाली गई। इसमें तामिल नाडू,केरल,कर्नाटक, आबू पर्वत, देहली, गुजरात तथा अन्य-अन्य नगरों से पधारे प्रतिनिधियों ने भाग लिया। २ मई को प्रातः १०.३० बजे ''सर्व के सहयोग से सुखमय संसार'' सम्मेलन का अर्नाकुल्म टाउन हाल में उद्घाटन हुआ । इस प्रातः सत्र का केरल के राज्यपाल भ्राता पी. रामाचंद्रन जी के प्रातः सत्र का केरल के राज्यपाल भ्राता पी. रामाचंद्रन जी ने उद्घाटन किया । दादी हृदयमोहिनी, देहली ज़ोन के सेवाकेंद्रों की इंचार्ज़, अध्यक्षा थीं। इस सत्र में गुयाना के हाई कमिश्नर भ्राता स्टीव नारायण जी, भ्राता बी.आर. कृष्णा अय्यर, पूर्व न्यायाधीश उच्चतम न्यायालय, न्यायमूर्ति पी.के. शम्सुद्दीन, राजयोगी बी.के. निर्वैर, श्री के.के. श्रीधरन नेयर, उप-सम्पादक मातुभूमि, तथा ब्रह्माकुमारी शिव कन्या वक्ता गण थे।

न्यायमूर्ति कुमारी जानकी अम्मा ने सर्व का स्वागत किया तथा एडवोकेट एम.आर. राजेंद्रन नेयर ने आभार प्रकट किया। ब्रह्माकुमार मृत्यञ्जय मंच सचिव थे।

राज्यपाल महोदय पी. रामचंद्रन जी ने ब्रह्माकुमारी ई.वि. विद्यालय की ओर से आध्यात्मिक क्रांति लाने के लिए किए जा रहे प्रयत्नों की सराहना की । ब्रह्माकुमार निर्वैर जी ने कहा कि यह सम्मेलन तथा अन्य कार्यक्रमों का आयोजन स्वयं परमपिता परमात्मा के आदेशानुसार किया जा रहा है। परमात्मा शिव ने यह आदेश दिया है कि एक आध्यात्मिक सहकारी बैंक खोला जाए जिसमें सर्व अपने नकारात्मक संस्कार और विचार जमा कर सकें जिससे नया सुखमय संसार का उदय हो ।

न्यायमूर्ति कृष्णा अय्यर जी ने अपने वक्तव्य में कहा कि ब्रह्माकुमारियां आध्यात्मिकता द्वारा मानव को अच्छा मानव बना रही हैं । अच्छे मानव से ही अच्छा संसार बनेगा। भ्राता स्टीव नारायण जी ने कहा कि आज मानव में आंतरिक परिवर्तन की आवश्यकता है जो कि ब्रह्माकुमारियां आध्यात्मिक ज्ञान और सहज राजयोग की शिक्षा देकर ला रही हैं । न्यायमूर्ति शम्सुद्दीन ने अपने प्रवचन में कहा कि मानव सामाजिक तथा आर्थिक दबाव में संघर्ष कर रहा है। वह आध्यात्मिक मूल्यों को अपनाकर ही छुटकारा पा सकता है। भ्राता श्रीधरन नेयर ने बताया कि आज सारा विश्व ब्रह्माकुमारियों के अभियान की ओर ताक रहा है क्योंकि सर्वत्र अशांति ही अशांति है। बी.के. शिव कन्या ने राजयोग की विधि पर प्रकाश डाला। दादी हृदयमोहिनी जी ने अपने अध्यक्षीय भाषण में कहा कि महात्मा गांधी तथा जवाहरलाल नेहरू जी के स्वप्नों का रामराज्य अब स्वयं परमपिता परमात्मा शिव स्थापन कर रहे हैं । हमें इस अभियान में सहयोग देना है।

२-३० बजे एक वर्कशाप का आयोजन किया गया तथा सांय ६.३० बजे समापन समारोह आयोजित किया गया । जिसमें भी भ्राता स्टीव नारायण, भ्राता बी.के. मृत्युञ्जय, न्यायमूर्ति कृष्णा अय्यर जी, बी.के. निर्वैर जी तथा दादी हृदयमोहिनी जी ने अपने सुंदर विचार रखे। □

ब्र.कु. आत्मप्रकाश, प्रकाशक तथा सम्पादक ने 'ओमशांति प्रेस' बी-7/27, कृष्णानगर, देहली-51 से छपाया। मुख्य सम्पादक ब्र.कु. जगदीश चंद्र हसीजा
Regd No 10563/65-D, (E) 70